ISSN 2278-1633ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-7, अंक: 8, संख्या-58 जनवरी 2025 मूल्य: ₹20

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति संग्रहालय

समिति के दो परिसर हैं- गांधी स्मृति और गांधी दर्शन।

गांधी स्मृति, 5, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली पर स्थित है। इस भवन में उनके जीवन के अंतिम 144 दिनों से जुड़े दुर्लभ चित्र, जानकारियाँ और मल्टीमीडिया संग्रहालय (Museum) है। जिसमें प्रवेश निःशुल्क है।

दूसरा परिसर गांधी दर्शन राजघाट पर स्थित है। यहाँ 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश' प्रदर्शनी, डोम थियेटर और राष्ट्रीय स्वच्छता केंद्र संग्रहालय (Museum) है।

दोनों परिसर के संग्रहालय प्रतिदिन प्रातः 10 से शाम 6:30 तक खुलते हैं।
(सोमवार एवं राजपत्रित अवकाश को छोड़ कर)

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-7, अंक: 8, संख्या-58
जनवरी 2025

संरक्षक
विजय गोयल
उपाध्यक्ष, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

प्रधान सम्पादक
डॉ. ज्वाला प्रसाद

सम्पादक
प्रवीण दत्त शर्मा
पंकज चौबे

परामर्श
वेदाभ्यास कुंडू
संजीत कुमार

प्रबन्ध सहयोग
शुभांगी गिरधर

आवरण
संजीव शाश्वती

मूल्य	: ₹20
वार्षिक सदस्यता	: ₹200
दो साल	: ₹400
तीन साल	: ₹500

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23392796
ई-मेल : antimjangsds@gmail.com
2010gsds@gmail.com

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली-110002, की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेखकों द्वारा उनकी रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण उनके अपने हैं, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली के नहीं।
समस्त मामले दिल्ली न्यायालय में ही विचाराधीन।

मुद्रक
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092

इस अंक में

धरोहर
'यज्ञ करो और खाओ' - *मोहनदास करमचंद गांधी* 5
भाषण
महाकवि सुब्रह्मण्य भारती को याद करते हुए-*श्री नरेंद्र मोदी* 9
संस्मरण
क्या कोई गांधी की तरह अपने जीवन में सफल हुआ है? - *विष्णु प्रभाकर* 12
डायरी
याद आती हैं बापू की बुझती हुई आँखें 22
श्रद्धांजलि
एक मतिभ्रम व्यक्ति ने बापू को मार डाला-*के. विक्रम राव* 27
विमर्श
प्राकृतिक चिकित्सा के समर्पित हिमायती गांधी जी - *नारायण भाई भट्टाचार्य* 30
'युवा इस देश का नमक है' - *सौरव कुमार राय* 34
आत्मनिर्भरता की भारतीय संकल्पना और महात्मा गांधी - *डॉ. धीरेंद्र प्रताप सिंह* 40
स्मरण
गांधी, सुभाषचंद्र बोस एवं डॉ. आंबेडकर की प्रतिबद्धताएँ - *प्रो. कन्हैया त्रिपाठी* 45
कविता
स्मृति-तर्पण - *सच्चिदानन्द पट्टनायक* 49
फोटो में गांधी 51
बाल कविता
ग्रामश्री - *सुमित्रानंदन पंत* 52
बाल उपन्यास
अंतरिक्ष का फोन - *क्षमा शर्मा* 54
बाल कहानी
लाइव एयर शो - *डॉ सुधा जगदीश गुप्त* 57
गांधी क्विज-9 59
गतिविधियाँ 60

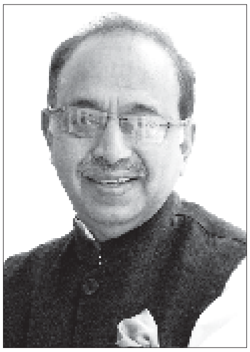

गांधीजी से सीखें जीवन में जोखिम उठाने की कला

महात्मा गांधी एक शांत स्वभाव के मृदुभाषी व्यक्ति थे। सहज और सरल भाषा में बातें करना उनकी आदत थी। लेकिन इन सबके बावजूद वे दृढ़ इरादों और जीवट स्वभाव वाले व्यक्ति थे। चाहे परिस्थिति कैसी भी हो, लेकिन लोगों के हित में वे जोखिम लेने से कभी पीछे नहीं हटते थे। जोखिम उठाने की उनकी प्रकृति ने ही उन्हें बैरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधी से ग्रेट महात्मा गांधी बनाया।

महात्मा गांधी के साथ दक्षिण अफ्रीका में दो ऐसे वाकये हुए, जिनसे उनकी जिंदगी बदल गई। वे जब दक्षिण अफ्रीका में पहुंचे, तो वहां रंगभेद का माहौल था। एक बार की बात है, गांधीजी फर्स्ट क्लास के रेल डिब्बे में बैठकर दक्षिण अफ्रीका के प्रिटोरिया शहर जा रहे थे। लेकिन उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया क्योंकि वे अश्वेत थे और फर्स्ट क्लास में बैठे थे। गांधीजी इस अन्याय के आगे झुके नहीं और अपनी जगह पर डटे रहे। लेकिन उन्हें सेंटपीटरमारित्जबर्ग स्टेशन पर धक्के मारकर उतार दिया गया।

इसी प्रकार एक बार कोर्ट में केस की सुनवाई के दौरान मोहनदास अपनी सीट पर बैठे हुए थे। तभी मजिस्ट्रेट ने उनकी तरफ इशारा किया और अपनी पगड़ी उतारने को कहा।

गांधीजी ने अपनी पगड़ी उतारने से मना कर दिया।

मजिस्ट्रेट गुस्से से चिल्लाता हुआ बोला–तुम इसे अभी उतारो।

इस पर गांधी जी अपनी सीट से उठे और कोर्ट से बाहर आ गए, लेकिन उन्होंने अपनी पगड़ी नहीं उतारी।

इन घटनाओं के बाद गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में छा गए। अखबारों में उनके बारे में लिखा जाने लगा। गांधीजी ने भी डटकर अन्याय का मुकाबला किया। यदि हम देखें, तो गांधीजी इन दोनों घटनाओं में चुपचाप अन्याय सह लेते तो उनका कोई नाम नहीं होता। लेकिन उन्होंने टकराने का साहस दिखाया और जोखिम उठाया तो वे आगे चलकर महात्मा गांधी बने।

महात्मा गांधी के इन प्रसंगों से सीख लेकर हम भी अपने जीवन में आगे बढ़ें और धारा के विपरीत चलकर अपना अलग मुकाम बनाएं। याद रखिए 'नो रिस्क–नो गेन' का नियम हम सबके जीवन में लागू होता है।

ताजा वर्ष में अंतिम जन का ताजा अंक आपके हाथों में है। उम्मीद है कि इसमें संकलित सामग्री आपको पसंद आएगी और आपके जीवन में प्रेरणा लाएगी।

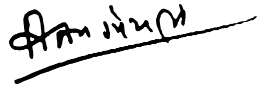

विजय गोयल

वंचितों के उत्थान से ही होगा देश खुशहाल

गांधीजी के मन में समाज के दरिद्र व्यक्तियों के उत्थान की चिंता सदैव रहती थी। वे अपने कार्यों के केंद्र में गरीब और कमजोर वर्ग को रखते थे। उनका एक प्रसिद्ध कथन है, जिसे गांधीजी का जंतर कहा जाता है। जिसमें उन्होंने कहा है–''जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा?''

इस जंतर के माध्यम से बापू ने समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति की सेवा करने और उनके जीवनस्तर को ऊपर उठाने का संदेश जनसाधारण को दिया। गांधीजी के मन में मजदूर, पिछड़े, कमजोर तबके के प्रति बड़ी हमदर्दी थी। वे चाहते थे कि देश में सबका दर्जा समान हो। 10 नवंबर 1946 को 'हरिजन सेवक' में उन्होंने लिखा, 'हर व्यक्ति को अपने विकास और अपने जीवन को सफल बनाने के समान अवसर मिलने चाहिए। यदि अवसर दिये जाएं तो हर आदमी समान रूप से अपना विकास कर सकता है।' उन्होंने मजदूर और आदिवासियों के विषय को अपने रचनात्मक कार्यक्रम में भी शामिल किया।

वे सर्वोदयी लोकतंत्र की बात करते थे। जिससे उनका तात्पर्य ऐसे लोकतंत्र से था, जिसमें गांवों को समुचित स्थान मिले। 18 जनवरी 1945 को 'हरिजन' में वे लिखते हैं–''सच्चे लोकतंत्र का संचालन केंद्र में बैठे बीस आदमियों से नहीं हो सकता। उसका संचालन नीचे से प्रत्येक गांव के लोगों को करना होगा।'' गरीब कल्याण के लिए वे आर्थिक समानता की बात भी करते थे। आर्थिक समानता से उनका मतलब यह नहीं था कि सभी गरीबों के पास पांच एकड़ भूमि हो, अपितु वे चाहते थे कि सरकारी योजनाओं का लाभ गरीबों को मिले। कम से कम मूलभूत सुविधााएं तो उनको मुहैया करवाई जाएं।

वास्तव में आर्थिक समानता के बिना किसी भी समाज के विकास की परिकल्पना अधूरी है। समाज की खुशहाली के लिए सभी लोग खुशहाल रहें, यह आवश्यक है। इसके लिए सरकारी प्रयास ही काफी नहीं, अपितु आर्थिक रूप से संपन्न लोगों को भी आगे आना होगा और कमजोर वर्ग को आगे बढ़ाने की दिशा में काम करना होगा। नए साल पर गरीब उत्थान का भी हम संकल्प ले सकते हैं।

'अंतिम जन' का जनवरी अंक अब आपके हाथों में है। जनवरी में ही महात्मा गांधी इस संसार को छोड़कर चले गए थे। यह अंक उनको श्रद्धांजलि स्वरूप है। आप पत्रिका के बारे में अपने सुझाव अवश्य भेजें।

डॉ ज्वाला प्रसाद

आपके ख़त

सुन्दर अंक

'अंतिम जन' का अक्टूबर अंक विचार के स्तर पर बहुत समृद्ध बना है। इसमें शामिल आलेख मोक्षदाता राम, जल संरक्षण को बनायें जन आन्दोलन, भुलाये नहीं भूलती गांधी की विनम्रता, गांधीजी का आर्थिक दर्शन, गांधीजी का स्वराज-रामराज का पर्याय, महात्मा गांधी एवं रेलगाड़ी, नई तालीम जीवन शिक्षण, उधार की संस्कृति आदि विचारपरक गंभीर लेख शामिल है। गांधी अपने आलेख में कहते हैं -'सब धर्म ईश्वर के दिए हुए हैं, लेकिन वे मनुष्य की कल्पना के हैं। और मनुष्य उनका प्रचार करता है, इसलिए वे अपूर्ण है। ईश्वर का दिया हुआ धर्म पहुँच के परे-अगम्य है। 'ईश्वर की सुन्दर व्याख्या गांधी करते हैं। ईश्वर को गांधी ने अपनी कृति अनासक्ति योग में बहुत सुन्दर ढंग से समझा और समझाया है। राम का निरंतर स्मरण गांधी करते थे। राम के नाम को गांधी मोक्षदाता मानते थे। धर्म के जानकार बतलाते हैं कि राम से बड़ा है राम का नाम। गांधी धर्म के मर्मज्ञ थे। उन्होंने धर्म का लोक कल्याणकारी रूप प्रस्तुत किया।

'अंतिम जन' के सभी अंक संग्रहणीय है। अंक के लिये साधुवाद।

टिंकु कुमार, रांची

स्वच्छता की डगर पे

स्वच्छता की डगर पे
बच्चों दिखाओ चल के
विजेता तुम ही अपने स्वच्छ भारत वाले कल के
स्वयं के साथ अपने आसपास को भी स्वच्छ रखना
तन के साथ मन के छुपे मैल को भी दूर रखना
रख दोगे एक दिन तुम भारत को बदल के,
स्वच्छता की डगर पे बच्चों दिखाओ चल के।
विजेता तुम ही हो अपने स्वच्छ भारत वाले कल के
बापू के स्वच्छ भारत मिशन को पूरा हमें है करना,
मोदी जी के नेतृत्व में 'स्वदेशी से आत्मनिर्भर भारत'
के संकल्प को सिद्ध हमें है करना।
सूखे-गीले कचरे को अलग कूड़ेदान में है डालना,
स्वच्छता के गुर हमें नित जीवन में है ढालना ।
स्वच्छता की डगर पे बच्चों दिखाओ चल के
रख दोगे एक दिन तुम भारत को बदल के।
प्लास्टिक की थैली को ना कहके जूट-कपड़े की थैली को हमें है आजमाना,
पर्यावरण अनुकूल जीवन हमें दिनचर्या में है अपनाना।
स्वच्छता की डगर पे बच्चों दिखाओ चल के,
नेता तुम ही हो अपने विकसित भारत वाले कल के।

बृजलाला रोहन 'अन्वेषी'

आप भी पत्र लिखें। सर्वश्रेष्ठ पत्र को पुरस्कृत कर, उपहार दिया जाएगा।

‘यज्ञ करो और खाओ’

‘मैं हिमालय क्यों नहीं जाता? वहाँ रहना तो मुझको पसंद पड़ेगा। ऐसा नहीं है कि मुझको वहाँ खाने-पीने-ओढ़ने को नहीं मिलेगा-वहाँ जाकर शांति मिलेगी, लेकिन मैं अशांति में से शांति चाहता हूँ, नहीं तो उस अशांति में मर जाना चाहता हूँ। मेरा हिमालय यही है।’

मोहनदास करमचंद गांधी

भाइयो और बहनो, मेरे सामने कहने को चीज तो काफी पड़ी हैं, उनमें से जो आज के लिए चुननी चाहिए, वे चुन ली हैं। छः चीजें हैं। पंद्रह मिनट में जितना कह सकूँगा, कहूँगा।

एक बात तो देख रहा हूँ कि थोड़ी देर हो गई है-यह होनी नहीं चाहिए थी। सुशीला बहन बहावलपुर चली गई हैं-दूसरा अधिकार तो कोई है नहीं और न हो सकता था। फ्रेंड्स सर्विस के लेसली क्रॉस के साथ चली गई हैं। फ्रेंड्स यूनिट में से किसी को भेजने का मैंने इरादा किया था, ताकि वह वहाँ लोगों को देखें, मिलें और मुझको वहाँ के हाल बता दें। उस वक्त सुशीला बहन के जाने की बात नहीं थी। लेकिन जब सुशीला बहन ने सुन लिया तो उसने मुझसे कहा कि इजाजत दे दो तो मैं क्रॉस साहब के साथ चली जाऊँ। वह जब नोआखली में काम करती थी तबसे वह उनको जानती थी। वह आखिर कुशल डॉक्टर है और पंजाब के गुजरात की है, उसने भी काफी गंवाया है क्योंकि उसकी तो वहाँ काफी जायदाद है, फिर भी दिल में कोई जहर पैदा नहीं हुआ है। तो उसने बताया कि मैं वहाँ क्यों जाना चाहती हूँः क्योंकि मैं पंजाबी बोली जानती हूँ, हिन्दुस्तानी जानती हूँ, उर्दू और अंग्रेजी भी जानती हूँ तो वहाँ मैं क्रॉस साहब को मदद दे सकूँगी। तो मैं यह सुनकर खुश हो गया। वहाँ खतरा तो है; लेकिन उसने कहा कि मुझको क्या खतरा है, ऐसा डरती तो नोआखली क्यों जाती? पंजाब में बहुत लोग मर गये हैं, बिलकुल मटियामेट हो गये हैं, लेकिन मेरा तो ऐसा नहीं; खाना-पीना सब मिल जाता है, ईश्वर सब करता है। अगर आप भेज दें और क्रॉस साहब मेरे को ले जायें तो मैं वहाँ के लोगों को देख लूँगी। तो मैंने क्रॉस साहब से पूछा कि क्या आपके साथ सुशीला बहन को भेजूँ तो वे खुश हो गये और कहा कि वह तो बड़ी अच्छी बात है। मैं उनके मारफत दूसरों से अच्छी तरह बातचीत कर सकूँगा। मित्रवर्ग में हिन्दुस्तानी जानने वाला कोई रहे तो वह बड़ी भारी चीज हो जाती है। इससे बेहतर क्या हो सकता है? वे रेडक्रास के हैं। रेडक्रास के माने यह हैं कि लड़ाई में जो मरीज हो जाते हैं उनको दवा देने का काम करना। अब तो दूसरा-तीसरा भी काम करते हैं। तो डॉक्टर

एक बात तो देख रहा हूँ कि थोड़ी देर हो गई है यह होनी नहीं चाहिए थी। सुशीला बहन बहावलपुर चली गई हैं दूसरा अधिकार तो कोई है नहीं और न हो सकता था। फ्रेंड्स सर्विस के लेसली क्रॉस के साथ चली गई हैं। फ्रेंड्स यूनिट में से किसी को भेजने का मैंने इरादा किया था, ताकि वह वहाँ लोगों को देखें, मिलें और मुझको वहाँ के हाल बता दें।

सुशीला क्रॉस साहब के साथ गई हैं या डॉक्टर सुशीला के साथ क्रॉस साहब गये हैं यह पेचीदा प्रश्न हो जाता है। लेकिन कोई पेचीदा है नहीं; क्योंकि दोनों एक–दूसरे के दोस्त हैं और दोनों एक–दूसरे को चाहते हैं, मोहब्बत करते हैं। वे सेवा–भाव से गये हैं, पैसा कमाना तो है नहीं। वे जो देखेंगे मुझे बतायेंगे और सुशीला बहन भी बतायेगी। मैं नहीं चाहता कि कोई ऐसा गुमान रखे कि वह तो डॉक्टर है और क्रॉस साहब दूसरे हैं। कौन ऊँचा है कौन नीचा है, ऐसा कोई भेदभाव न करें; लेकिन क्रॉस साहब, उनके साथ औरत है तो औरत को आगे कर देते हैं और अपने को पीछे रखते हैं। आखिर वे उनके दोस्त हैं। मैं एक बात और कह देना चाहता हूँ, नवाब साहब तो मुझको लिखते रहते हैं, मुझको कई लोग झूठी बात भी लिखते हैं तो उसे मानने का मेरा क्या अधिकार है। मैंने सोचा कि मुझको क्या करना चाहिए। तो बहावलपुर के जो आये हैं उनको बता दूँ कि वे वहाँ से आयेंगे तो मुझको सब बता देंगे।

कौन ऊँचा है कौन नीचा है, ऐसा कोई भेदभाव न करें; लेकिन क्रॉस साहब, उनके साथ औरत है तो औरत को आगे कर देते हैं और अपने को पीछे रखते हैं। आखिर वे उनके दोस्त हैं। मैं एक बात और कह देना चाहता हूँ, नवाब साहब तो मुझको लिखते रहते हैं, मुझको कई लोग झूठी बात भी लिखते हैं तो उसे मानने का मेरा क्या अधिकार है। मैंने सोचा कि मुझको क्या करना चाहिए। तो बहावलपुर के जो आये हैं उनको बता दूँ कि वे वहाँ से आयेंगे तो मुझको सब बता देंगे।

अभी बन्नू के भाई लोग मेरे पास आ गये थे शायद चालीस आदमी थे। वे परेशान तो हैं, लेकिन ऐसे नहीं हैं कि चल नहीं सकते थे। हाँ किसी की अंगुली में घाव लगे थे, कहीं कुछ था, कहीं कुछ था, ऐसे थे। मैंने तो उनका दर्शन ही किया और कहा कि जो कुछ कहना है व्रजकिशनजी से कह दें, लेकिन इतना समझ लें कि मैं उन्हें भूला नहीं हूँ। वे सब भले आदमी थे। गुस्से से भरे होना चाहिए था, लेकिन फिर भी वे मेरी बात मान गये। एक भाई थे, वे शरणार्थी थे या कौन थे, मैंने पूछा नहीं। उसने कहा कि तुमने बहुत खराबी तो कर ली है, क्या और करते जाओगे? इससे बेहतर है कि जाओ। बड़े हैं, महात्मा हैं तो क्या, हमारा काम तो बिगाड़ते ही हो। तुम हमको छोड़ दो, भूल जाओ, भागो। मैंने पूछा, कहाँ जाऊँ? उन्होंने कहा, तुम हिमालय जाओ। तो मैंने डाँटा। वे मेरे जितने बुजुर्ग नहीं हैं वैसे बुजुर्ग हैं, तगड़े हैं, मेरे–जैसे पाँच– सात आदमी को चट कर सकते हैं। मैं तो महात्मा रहा, घबराहट में पड़ जाऊँ तो मेरा क्या हाल होगा। तो मैंने हँसकर कहा कि क्या मैं आपके कहने से जाऊँ, किसकी बात सुनूँ? क्योंकि कोई कहता है कि यहीं रहो, कोई तारीफ करता है, कोई डाँटता है, कोई गाली देता है। तो मैं क्या करूँ? ईश्वर जो हुक्म करता है वही मैं करता हूँ। आप कह सकते हैं कि आप ईश्वर को नहीं मानते हैं तो इतना तो करें कि मुझे अपने दिलके अनुसार करने दें। आप कह सकते हैं कि ईश्वर तो हम हैं। मैंने कहा तो परमेश्वर कहाँ जायेगा। ईश्वर तो एक है। हाँ, यह ठीक है कि पंच परमेश्वर है, लेकिन यह पंचका सवाल नहीं है। दुःखी का बेली परमेश्वर है; लेकिन दुःखी खुद परमात्मा नहीं। जब मैं दावा करता हूँ कि जो हर एक स्त्री है, मेरी सगी बहन है, लड़की है तो उसका दुःख मेरा दुःख है। आप ऐसा क्यों मानते हैं कि मैं दुःख को नहीं जानता, आपके दुःखों में हिस्सा नहीं लेता, मैं हिन्दुओं और सिखों का दुश्मन हूँ और मुसलमानों का दोस्त हूँ। उसने साफ–साफ कह दिया। कोई गाली देकर लिखता है, कोई विवेक से लिखता है कि हमको छोड़ दो, चाहे हम दोजख में जायें तो क्या? तुमको क्या पड़ी है, तुम भागो? मैं किसी के कहने से कैसे भाग सकता हूँ। किसी के कहने से मैं खिदमतगार नहीं बना हूँ, किसी के कहने से मैं मिट नहीं सकता हूँ, ईश्वर चाहे तो मुझको मार सकता है। मैं समझता हूँ कि मैं ईश्वर की बात मानता हूँ। एक डाँटता है, दूसरे लोग मेरी तारीफ करते हैं तो मैं क्या करूँ? मैं हिमालय क्यों नहीं जाता? वहाँ रहना तो मुझको पसंद पड़ेगा। ऐसा नही है कि मुझको वहाँ खाने–पीने ओढ़ने को नहीं मिलेगा वहाँ जाकर शांति मिलेगी, लेकिन मैं अशांति में से शांति चाहता हूँ, नहीं तो उस अशांति में मर जाना चाहता हूँ। मेरा हिमालय यहीं है। आप सब हिमालय चलें तो मुझको भी आप लेते चलें।

मेरे पास शिकायतें आती हैं– सही शिकायतें हैं कि यहाँ शरणार्थी पड़े हैं, उनको खाना देते हैं, पीना देते हैं, पहनने को देते हैं, जो हो सकता है सब करते हैं लेकिन वे मेहनत नहीं करना चाहते हैं, काम नहीं करना चाहते हैं। जो उनकी खिदमत करते हैं उन लोगों ने लम्बा–चौड़ा लिखकर

दिया है, उसमें से मैं उतना ही कह देता हूँ। मैंने तो कह दिया है कि अगर दु:ख मिटाना चाहते हैं, दु:ख में से सुख निकालना चाहते हैं, दु:ख में भी हिन्दुस्तान की सेवा करना चाहते हैं, साथ में अपनी भी सेवा हो जाती है, तो दु:खियों को काम तो करना ही चाहिए। दु:खी को ऐसा हक नहीं है कि वह काम न करे और मौज-शौक करे। गीता में तो कहा है, 'यज्ञ करो और खाओ' यज्ञ करो और शेष रह जाता है उसको खाओ। यह मेरे लिए है और आपके लिए नहीं है ऐसा नहीं है- सब के लिए है। जो दु:खी हैं उनके लिए भी है। एक आदमी कुछ करे नहीं, बैठा रहे और खाये तो ऐसा हो नहीं सकता। करोड़पति भी काम न करे और खाये, तो वह निकम्मा है, पृथ्वी पर भार है। जिस आदमी के घर पैसा भी है वह भी मेहनत करके खाये तब बनता है। हाँ कोई लाचारी है, पैर से नहीं चल सकता है या अंधा है, या वृद्ध हो गया है तो बात दूसरी है, लेकिन जो तगड़ा है, वह क्यों न काम करे? जो काम कर सकता है वह काम करे। शिविर में जो तगड़े पड़े हैं वे पाखाना भी उठायें। चरखा चलायें। जो काम बन सकता है करें। जो काम नहीं जानते हैं वे काम लड़कों को सिखायें, इस तरह से काम लें। लेकिन कोई कहे कि कैम्ब्रिज में जैसे सिखाते हैं वैसे सिखायें। मैं, मेरा बाबा तो कैम्ब्रिज में सीखा था तो लड़कों को भी वहाँ भेजें, तो यह कैसे हो सकता है? मैं तो इतना ही कहूँगा कि जितने शरणार्थी हैं वे काम करके खायें? उन्हें काम करना ही चाहिए।

आज एक सज्जन आये थे। उनका नाम तो मैं भूल गया। उन्होंने किसानों की बात की। मैंने कहा, मेरी चले तो हमारा गवर्नर जनरल किसान होगा, हमारा बड़ा वजीर किसान होगा, सब-कुछ किसान होगा, क्योंकि यहाँ का राजा किसान है। मुझे बचपन से सिखाया था, एक कविता है 'हे किसान, तू बादशाह है।' किसान जमीन से पैदा न करे तो हम क्या खायेंगे? हिन्दुस्तान का सचमुच राजा तो वही है। लेकिन आज हम उसे गुलाम बनाकर बैठे हैं। आज किसान क्या करे? एम०ए० बने? बी० ए० बने? ऐसा किया, तो किसान मिट जायेगा। पीछे वह कुदाली नहीं चलाएगा। प्रधान बने, तो हिन्दुस्तान की शक्ल बदल जायेगी। आज जो सड़ा पड़ा है वह नहीं रहेगा।

मद्रास में खुराक की तंगी है। मद्रास सरकार की तरफ से दूत यह कहने के लिए श्री जयरामदास (केन्द्रीय मंत्रीमंडल में खाद्य एवं कृषि मंत्री) के पास आये थे कि वे उस सूबे के लिए अन्न देने का बंदोबस्त करें। मुझे मद्रासवालों के इस रुख से दु:ख होता है। मैं मद्रास के लोगों को यह समझाना चाहता हूँ कि वे अपने ही सूबे में मूँगफली, नारियल और दूसरे खाद्य पदार्थ के रूप में काफी खुराक पा सकते हैं। उनके यहाँ मछली भी काफी है, जिन्हें उनमें से ज्यादातर लोग खाते हैं। तब उन्हें भीख माँगने के लिए बाहर निकलने की क्या जरूरत है? उनका चावल का आग्रह रखना वह भी पालिश किया हुआ चावल, जिसके सारे पोषक तत्व मर जाते हैं या चावल न मिलने पर मजबूरी से गेहूँ मंजूर करना ठीक नहीं है। चावल के आटे में वे मूँगफली या नारियल का आटा मिला सकते हैं और इस तरह अकाल के भेड़िये को आने से रोक सकते हैं। उन्हें जरूरत है आत्मविश्वास और श्रद्धा की। मद्रासियों को मैं अच्छी तरहसे जानता हूँ और दक्षिण अफ्रीका में उस प्रान्त के सभी भाषा वाले हिस्सों के लोग मेरे साथ थे। सत्याग्रह कूच के वक्त उन्हें रोजाना के राशन में सिर्फ डेढ़ पौंड़ रोटी और एक औंस शक्कर दी जाती थी। मगर जहाँ कहीं उन्होंने रात को डेरा डाला, वहाँ जंगल की घास में से खाने लायक चीजें चुनकर और मजे से गाते हुए उन्हें पकाकर उन्होंने मुझे अचरज में डाल दिया। ऐसे सूझ-बूझवाले लोग कभी लाचारी कैसे महसूस कर सकते हैं? यह सच है कि हम सब मजदूर थे और ईमानदारी से काम करने में ही हमारी मुक्ति और हमारी सभी आवश्यक जरूरतों की पूर्ति भरी है।

(प्रार्थना-प्रवचन भाग-2)

गीता में तो कहा है, 'यज्ञ करो और खाओ' यज्ञ करो और शेष रह जाता है उसको खाओ। यह मेरे लिए है और आपके लिए नहीं है ऐसा नहीं है- सब के लिए है। जो दु:खी हैं उनके लिए भी है। एक आदमी कुछ करे नहीं, बैठा रहे और खाये तो ऐसा हो नहीं सकता। करोड़पति भी काम न करे और खाये, तो वह निकम्मा है, पृथ्वी पर भार है। जिस आदमी के घर पैसा भी है वह भी मेहनत करके खाये तब बनता है। हाँ कोई लाचारी है, पैर से नहीं चल सकता है या अंधा है, या वृद्ध हो गया है तो बात दूसरी है, लेकिन जो तगड़ा है, वह क्यों न काम करे? जो काम कर सकता है वह काम करे।

शब्दांजलि

पूज्य शंकराचार्य, श्री कामकोटि पीठ

महात्मा गांधी ने घृणा का पूर्णतया परित्याग कर दिया। अहिंसा और प्रेम का इससे अधिक बड़ा आदर्श नहीं हो सकता। गांधीजी ने प्रत्येक बुरी घटना का उपयोग अपनी आंतरिक पवित्रता की परीक्षा के तौर पर किया।

चाहे आंतरिक अपराध से निपटने के लिए न्यायिक दंड के रूप में हो या विदेशी आक्रमण से निपटने के लिए युद्ध के रूप में, राजनीतिक जीवन में हिंसा अपरिहार्य है। लेकिन हमारे अहिंसा के दूत (गांधीजी) ने घृणा का पूर्णतया त्याग कर उस अपरिहार्य हिंसा को भी अहिंसा में बदलने का प्रयास किया।

श्री अरबिंदो

प्रकाश जलता रहेगा। मैं इन परिस्थितियों के सामने मौन रहना पसंद करता हूँ, जो हमारे चारों ओर हैं। क्योंकि, ऐसी घटनाओं के बीच हमारे पास जो भी शब्द हैं, वे बेकार हो जाते हैं।

लेकिन, मैं इतना अवश्य कहूंगा कि वह प्रकाश जिसने हमें स्वतंत्रता की ओर अग्रसर किया, यद्यपि अभी तक एकता की ओर नहीं, अभी भी जल रहा है और तब तक जलता रहेगा, जब तक कि वह विजय प्राप्त न कर ले। मेरा दृढ़ विश्वास है कि एक महान और एकजुट भविष्य ही राष्ट्र और उसके लोगों की नियति है।

जिस शक्ति ने हमें इतने संघर्ष और कष्टों से स्वतंत्रता दिलाई, वह चाहे कितने भी संघर्ष या संकट से गुजरे, वह लक्ष्य भी प्राप्त करेगी जो उस नेता के दुखद अंत के समय उनके विचारों में था: जिस तरह उन्होंने हमें स्वतंत्रता दिलाई, उसी तरह यह हमें एकता भी दिलाएगी।

जयप्रकाश नारायण

हमें उनके दिखाए मार्ग पर चलना चाहिए। यह बोलने का समय नहीं है, यह शोक का अवसर है। आइए हम रोएं। राष्ट्र को रोना चाहिए और अपनी आत्मा से दुनिया के सबसे महान व्यक्ति के निर्दोष खून के दाग को मिटा देना चाहिए।

हमें महात्मा गांधी द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलना चाहिए। वह एक विशेष मिशन के साथ दिल्ली आए थे, या तो करने के लिए या मरने के लिए। उन्होंने बहुत कुछ किया और अंत में उन्होंने जो करना चाहा, उसके लिए उन्होंने अपना जीवन बलिदान कर दिया। आइए अब हम उस पवित्र कार्य को पूरा करें जो उन्होंने अधूरा छोड़ दिया है।

दलाई लामा

शांति के महान दूत महात्मा गांधी के निधन की खबर सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ।

जी.वी. मावलंकर

उनका (गांधी का) दृष्टिकोण मानवता का था। हमारे जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है, जिसमें महात्मा गांधी का प्रभाव न दिखाई दे और न महसूस हो। उन्होंने हमारी राजनीति, हमारी अर्थव्यवस्था, हमारी शिक्षा को एक नई दिशा दी और हमारे सार्वजनिक जीवन में हर चीज को आध्यात्मिक बनाने का प्रयास किया। वे हमारे युग के सबसे महान व्यक्ति थे। घृणा और हिंसक संघर्षों के सबसे बुरे दौर में भी उनके दिल में हमेशा मानवता के लिए प्रेम जलता रहा और वे कभी निराशावादी नहीं रहे, भले ही उन्हें पता था कि उनकी आवाज एकाकी है। अपने सिद्धांतों और मिशन में उनका ऐसा अटूट विश्वास स्वाभाविक रूप से हमारे लिए ताकत का स्रोत था।

हम उन्हें बहुत ही महत्वपूर्ण समय पर खो रहे हैं, न केवल हमारे देश के इतिहास में बल्कि शायद विश्व के इतिहास में भी। उनका दृष्टिकोण मानवता, अंतर्राष्ट्रीय भाईचारे और 'एक विश्व' का था। उनके लिए जो सम्मान, प्यार, भावना और शोक है, उसे व्यक्त करने के लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं।

महाकवि सुब्रह्मण्य भारती को याद करते हुए

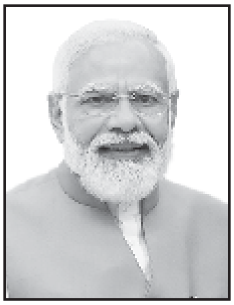

श्री नरेंद्र मोदी

आज देश महाकवि सुब्रह्मण्य भारती जी की जन्म जयंती मना रहा है। मैं सुब्रह्मण्य भारती जी को श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ। उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। आज भारत की संस्कृति और साहित्य के लिए भारत के स्वतन्त्रता संग्राम की स्मृतियों के लिए और तमिलनाडु के गौरव के लिए एक बहुत बड़ा अवसर है। महाकवि सुब्रह्मण्य भारती के कार्यों का, उनकी रचनाओं का प्रकाशन एक बहुत बड़ा सेवायज्ञ, एक बहुत बड़ी साधना आज उसकी पूर्णावर्ती हो रही है। 21 खंडों में 'कालवरिसैयिल् भारतिया 'पडैप्पुगळ्' का संकलन 6 दशकों की अथक मेहनत का ऐसा साहस, असाधारण है, अभूतपूर्व है। सीनी विश्वनाथन जी का ये समर्पण, ये साधना है, ये परिश्रम, मुझे पूरा विश्वास है, आने वाली पीढ़ियों को बहुत इसका लाभ मिलने वाला है। हम कभी कभी एक शब्द तो सुनते थे। वन लाइफ, वन मिशन। लेकिन वन लाइफ वन मिशन क्या होता है ये सीनी जी ने देखा है। बहुत बड़ी साधना है ये। उनकी तपस्या ने आज मुझे महा-महोपाध्याय पांडुरंग वामन काणे की याद दिला दी है। उन्होंने अपने जीवन के 35 वर्ष History of धर्मशास्त्र लिखने में लगा दिये थे। मुझे विश्वास है, सीनी विश्वनाथन जी का ये काम एकैडमिक जगत में एक बेंच-मार्क बनेगा। मैं इस कार्य के लिए विश्वनाथन जी को उनके सभी सहयोगियों को और आप सभी को बहुत बहुत बधाई देता हूँ।

साथियों, मुझे बताया गया है, "कालवरिसैयिल् भारतिया 'पडैप्पुगळ्" के इन 23 खंडों में केवल भारतियार जी की रचनाएँ ही नहीं हैं, इनमें उनके साहित्य के बैक-ग्राउंड की जानकारी और दार्शनिक विश्लेषण भी शामिल है। हर खंड में भाष्य, विवरण और टीका को जगह दी गई है। इससे भारती जी के विचारों को गहराई से जानने, उसकी गहराई को समझने में और उस कालखंड के परिदृश्य को समझने में बहुत बड़ी मदद मिलेगी। साथ ही, ये संकलन रिसर्च स्कॉलर्स के लिए, विद्वानों के लिए भी बहुत मददगार साबित होगा।

साथियों, आज गीता जयंती का पावन अवसर भी है। श्री सुब्रह्मण्य भारती जी की गीता के प्रति गहरी आस्था थी, और गीता-ज्ञान को लेकर उनकी समझ भी उतनी ही गहरी थी। उन्होंने गीता का तमिल में अनुवाद किया, उसकी सरल और सुगम व्याख्या भी की। और आज देखिए,आज गीता-जयंती, सुब्रह्मण्य भारती जी की जयंती और उनके कामों के प्रकाशन

आज भारत की संस्कृति और साहित्य के लिए भारत के स्वतन्त्रता संग्राम की स्मृतियों के लिए और तमिलनाडु के गौरव के लिए एक बहुत बड़ा अवसर है। महाकवि सुब्रह्मण्य भारती के कार्यों का, उनकी रचनाओं का प्रकाशन एक बहुत बड़ा सेवायज्ञ, एक बहुत बड़ी साधना आज उसकी पूर्णावर्ती हो रही है। 21 खंडों में 'कालवरिसैयिल् भारतिया 'पडैप्पुगळ्' का संकलन 6 दशकों की अथक...

का संयोग यानी एक प्रकार से त्रिवेणी संगम है। मैं इस कार्यक्रम के माध्यम से आप सभी को और सभी देशवासियों को गीता जयंती की हार्दिक शुभकामनाएँ भी देता हूँ।

साथियों, हमारे देश में शब्दों को केवल अभिव्यक्ति ही नहीं माना गया है। हम उस संस्कृति का हिस्सा हैं, जो 'शब्द ब्रह्म' की बात करती है,शब्द के असीम सामर्थ्य की चर्चा करती है। इसीलिए, ऋषियों और मनीषियों के शब्द, ये केवल उनके विचार नहीं होते। ये उनके चिंतन, उनके अनुभव और उनकी साधना का सार होता है। उन असाधारण चेतनाओं के सार को आत्मसात करना और उसे अगली पीढ़ियों के लिए संरक्षित करना, ये हम सबका कर्तव्य है। आज इस तरह के संकलन का जितना महत्व आधुनिक संदर्भ में है, हमारी परंपरा में भी इसकी उतनी ही प्रासंगिकता है। उदाहरण के लिए, हमारे यहाँ भगवान व्यास की लिखी कितनी ही रचनाओं की मान्यता है। वो रचनाएँ आज भी हमारे पास उपलब्ध हैं, क्योंकि वो पुराण की एक व्यवस्था के रूप में संकलित हैं। इसी तरह, Complete work of Swami Vivekananda, Dr. Babasaheb Ambedkar Writings and Speech, दीन दयाल उपाध्याय संपूर्ण वांग्मय, आधुनिक समय के ऐसे संकलन हमारे समाज और एकेडमिया के लिए बहुत उपयोगी साबित हो रहे हैं। 'थिरुक्कुरल' को भी अलग-अलग भाषाओं में अनुवाद करने का काम जारी है। अभी पिछले ही साल जब मैं पापुआ न्यू गिनी गया था, तो वहां की स्थानीय टोक पिसिन भाषा में 'थिरुक्कुरल' को रिलीज करने का सौभाग्य मिला। इससे पहले यहीं लोक कल्याण मार्ग में, मैंने गुजराती में भी 'थिरुक्कुरल' के अनुवाद को लोकार्पित किया था।

साथियों, सुब्रह्मण्य भारती जी ऐसे महान मनीषी थे जो देश की आवश्यकताओं को देखते हुए काम करते थे। उनका विजन व्यापक था। उन्होंने हर उस दिशा में काम किया, जिसकी जरूरत उस कालखंड में देश को थी। भारतियार केवल तमिलनाडु और तमिल भाषा की ही धरोहर नहीं हैं। वो एक ऐसे विचारक थे, जिनकी हर सांस माँ भारती की सेवा के लिए समर्पित थी। भारत का उत्कर्ष, भारत का गौरव, ये उनका सपना था। हमारी सरकार ने कर्तव्य भावना से भारतियार जी के योगदान को जन-जन तक पहुँचाने के लिए हो सके उतना प्रयास किया है। 2020 में कोविड की कठिनाइयों से पूरा विश्व परेशान था, लेकिन उसके बावजूद हमने सुब्रह्मण्य भारती जी की 100वीं पुण्यतिथि बहुत भव्य तरीके से मनाई थी। मैं खुद भी इंटरनेशनल भारती फेस्टिवल का हिस्सा बना था। देश के भीतर लालकिले की प्राचीर हो या दुनिया के दूसरे देश, मैंने निरंतर भारत के विजन को महाकवि भारती के विचार के जरिए दुनिया के सामने रखा है। और अभी सिनी जी ने उल्लेख किया कि विश्व में जब मैं जहां गया मैंने भारती जी की चर्चा की है और उसका गौरवगान सीनी जी ने किया। और आप जानते हैं मेरे और सुब्रह्मण्य भारती जी के बीच एक जीवंत कड़ी, एक आत्मिक कड़ी हमारी काशी भी है। मेरी काशी से उनका रिश्ता, काशी में बिताया गया उनका समय,ये काशी की विरासत का एक हिस्सा बन चुका है। वो काशी में ज्ञान प्राप्त करने आए, और वहीं के होकर रह गए। उनके परिवार के कई सदस्य आज भी काशी में रहते हैं। और मेरा सौभाग्य है मेरा उनसे संपर्क है। ऐसा कहा जाता है कि अपनी शानदार मूंछें रखने की प्रेरणा भी भारती को काशी में रहते हुए ही मिली थी। भारती ने अपनी बहुत सी रचनाएँ गंगा के तट पर काशी में रहते हुए लिखी थीं। इसलिए आज मैं उनके शब्द संकलन के इस पवित्र काम का काशी के सांसद के रूप में भी स्वागत करता हूँ, अभिनंदन करता हूँ। ये हमारी सरकार का सौभाग्य है कि महाकवि भारती के योगदान को समर्पित एक चेयर की स्थापना बी.एच.यू. में की गई है।

साथियों, सुब्रह्मण्य भारती ऐसा व्यक्तित्व सदियों में कभी एकआध बार मिलता है। उनका चिंतन, उनकी मेधा, उनका बहु-आयामी व्यक्तित्व, ये आज भी हर किसी को भी हैरान करता है। केवल 39 वर्ष के जीवन में भारती जी ने हमें इतना कुछ दिया है, जिसकी व्याख्या में विद्वानों का जीवन निकल जाता है। 39 वर्ष और उनको काम करते करते 60 साल गए। बचपन में खेलने और सीखने की उम्र में वो राष्ट्रप्रेम की भावना जगा रहे थे। एक ओर वो आध्यात्म के साधक भी थे, दूसरी ओर वो आधुनिकता के समर्थक भी थे। उनकी रचनाओं में प्रकृति के लिए प्यार भी दिखता है, और बेहतर भविष्य की प्रेरणा भी दिखती है। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान उन्होंने आजादी को केवल मांगा नहीं, बल्कि भारत के जन-मानस को आजाद होने के लिए झकझोरा भी था। और ये बहुत बड़ी बात होती है! उन्होंने देशवासियों से कहा था, मैं तमिल में ही बोलने का प्रयास कर रहा हूँ। उच्चारण दोष के लिए आप सब विद्वत्जन मुझे माफ करना। महाकवि भारतियार ने कहा था

एन्नु तणियुम् इन्द सुदन्तिर, दागम्। एन्नु मडियुम् एंगळ् अडिमैयिन्मोगम्।

यानि, आजादी की ये प्यास कब बुझेगी? गुलामी से हमारा ये मोह कब खत्म होगा? यानी उस समय एक वर्ग था जिनको गुलामी का भी मोह था, उनको डांटते थे। गुलामी का ये मोह कब खत्म होगा? ये आवाहन वही व्यक्ति कर सकता है, जिसके भीतर आत्म अवलोकन का साहस भी हो, और जीतने का विश्वास भी हो! और यही भारतियार की विशेषता थी। वो दो टूक कहते थे, समाज को दिशा दिखाते थे। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उन्होंने अद्भुत कार्य किए हैं। 1904 में वो तमिल अखबार स्वदेशमित्रन से जुड़े। फिर 1906 में लाल कागज पर इंडिया नाम का वीकली न्यूजपेपर छापना शुरू किया। ये तमिलनाडु में पॉलिटिकल कार्टून छापने वाला पहला न्यूजपेपर था। भारती जी समाज के कमजोर और वंचित लोगों की मदद के लिए प्रेरित करते थे। अपनी कविता संग्रह कण्णन पाट्टु में उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण की कल्पना 23 रूपों में की है। अपनी एक कविता में वो गरीब परिवारों के लिए सबसे जरूरतमंद लोगों के लिए कपड़ों का उपहार मांगते हैं। इस तरीके से वो उन लोगों तक संदेश पहुँचा रहे थे, जो दान कर पाने में सक्षम थे। परोपकार की प्रेरणा से भरी उनकी कविताओं से हमें आज भी प्रेरणा मिलती है।

साथियों, भारतियार अपने समय से बहुत आगे देखने वाले, भविष्य को समझने वाले व्यक्ति थे। उस दौर में भी, जब समाज दूसरी मुश्किलों में उलझा था। भारतियार युवा और महिला सशक्तिकरण के प्रबल समर्थक थे। भारतियार का विज्ञान और इनोवेशन में भी अपार भरोसा था। उन्होंने उस दौर में ऐसी कम्युनिकेशन की परिकल्पना की थी, जो दूरियों को कम करके पूरे देश को जोड़ने का काम करे। और आज जिस टेक्नोलॉजी को हम लोग जी रहे हैं। भारतीयार जी ने उस टेक्नोलॉजी की चर्चा उस जमाने में की थी। उन्होंने कहा था–

"काशी नगर, पुलवर पेसुम्, उरै तान् ॥ कांचियिल्, केट्पदर्कोर, करुवि चेय्वोम ॥

यानि एक ऐसा उपकरण होना चाहिए जिससे कांची में बैठकर ये सुन सकें कि बनारस के संत क्या कह रहे हैं। आज हम ये देख रहे हैं, डिजिटल इंडिया कैसे इन सपनों को हकीकत में बदल रहा है। भाषिणी जैसे एप्पस ने इसमें भाषा की तमाम मुश्किलों को भी समाप्त कर दिया है। जब भारत की हर भाषा के प्रति सम्मान का भाव हो, जब भारत की हर भाषा के प्रति गौरव हो, जब भारत की हर भाषा को संरक्षित करने की नेक नीयत हो, तो ऐसे ही हर भाषा के लिए सेवा का काम होता है।

साथियों, महाकवि भारती जी का साहित्य विश्व की सबसे प्राचीन तमिल भाषा के लिए एक धरोहर की तरह है। और हमें गर्व है कि दुनिया की सबसे पुरातन भाषा हमारी तमिल भाषा है। जब हम उनके साहित्य का प्रसार करते हैं, तो हम तमिल भाषा की भी सेवा करते हैं। जब हम तमिल की सेवा करते हैं, तो हम इस देश की प्राचीनतम विरासत की भी सेवा करते हैं।

भाइयों बहनों, पिछले 10 वर्षों में तमिल भाषा के गौरव के लिए देश ने समर्पित भाव से काम किया है। मैंने यूनाइटेड नेशंस में तमिल के गौरव को पूरी दुनिया के सामने रखा था। हम दुनिया भर में थिरुवल्लवर कल्चरल सेंटर्स भी खोल रहे हैं। एक भारत श्रेष्ठ भारत की भावना में सुब्रह्मण्य भारती के विचारों का प्रतिबिंब है। भारतियार ने हमेशा देश की विभिन्न संस्कृतियों को जोड़ने वाली विचारधारा को मजबूत किया। आज काशी तमिल संगमम् और सौराष्ट्र तमिल संगमम् जैसे आयोजन वही काम कर रहे हैं। इससे देश भर में लोगों को तमिल के बारे में जानने सीखने की उत्सुकता बढ़ रही है। तमिलनाडु की संस्कृति का भी प्रचार हो रहा है। देश की हर भाषा को हर देशवासी अपना समझे, हर भाषा पर हर भारतीय को गौरव हो,ये हमारा संकल्प है। हमने तमिल जैसी भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए मातृभाषा में हायर एजुकेशन का विकल्प भी युवाओं को दिया है।

साथियों, मुझे भरोसा है, भारती जी का साहित्य संकलन तमिल भाषा के प्रचार-प्रसार से जुड़े हमारे इन प्रयासों को बढ़ावा देगा। हम सब मिलकर विकसित भारत के लक्ष्य तक पहुंचेंगे, भारतियार के सपनों को पूरा करेंगे। मैं एक बार फिर, आप सभी को इस संकलन और प्रकाशन के लिए बधाई देता हूँ। और मैं देख रहा था उम्र के इस पड़ाव में तमिल में रहना और... दिल्ली की ठंड में आवाज देखिए कितना बड़ा सौभाग्य है जी और जीवन कितना तपस्या से जिया होगा और मैं उनके हेंड राइटिंग देख रहा था। इतने सुंदर हेंड राइटिंग्स हैं। इस आयु में हम हस्ताक्षर करते समय भी हिल जाते हैं। ये सच्चे अर्थ में आपकी साधना है, आपकी तपस्या है। मैं आपको सच्ची श्रद्धा से प्रणाम करता हूँ। आप सबको वणक्कम, बहुत-बहुत धन्यवाद!

(तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती की संपूर्ण रचनाओं के विमोचन पर प्रधानमंत्री का 11 दिसम्बर 2024 का संबोधन)

संस्मरण

क्या कोई गांधी की तरह अपने जीवन में सफल हुआ है?

''और उसी महामानव के लिए तुम रोते हो! वे महान् थे; उनका अन्त भी उतना ही महान् है। क्या आज तक किसी ने ऐसी मृत्यु पाई है? क्या कोई गांधी की तरह अपने जीवन में सफल हुआ है? क्या कोई इन्सान जीते-जी ईश्वर बना है? और क्या...?''

विष्णु प्रभाकर

आज यह याद नहीं पड़ता कि मैंने गांधीजी का नाम पहले-पहल कब सुना, लेकिन मुझे वह दिन आज भी ठीक याद है जब लोकमान्य तिलक की मृत्यु का समाचार पश्चिमी उत्तरप्रदेश के मेरे एक छोटे से गाँव में पहुँचा था। वह दिन भी आज मेरी स्मृति से मिटा नहीं है जब मैंने हिन्दू-मुसलमानों के जुलूस को खिलाफत के नारे लगाते हुए सुना था। और सुना था जलियाँवाला बाग के निर्माता डायर के विरुद्ध जनता का प्रसिद्ध गीत जिसमें वह सरकार से प्रार्थना करती थी कि डायर को उन्हें सौंप दिया जाए। खद्दर की पुकार लगाने वाली अनेक सभाओं में भी गया था। और याद आता है कि उन सभाओं में बराबर गांधी का नाम आता था । यह बताना बड़ा कठिन है कि वह नाम सुनकर कैसा लगता था लेकिन इतना निश्चित है कि उस नाम की प्रतिष्ठा किसी भी बड़े देवता से कम न थी और मेरे मन में खद्दर के प्रति जो ममता आज तक बनी हुई है वह उन्हीं दिनों पैदा हुई थी। तब मैं आठवें वर्ष में चल रहा था।

वह चित्र स्पष्ट नहीं है, शायद यह अच्छा ही है, क्योंकि उसका धुंधलापन ही आज मन की सुख पहुँचाता है। उसमें तर्क नहीं, श्रद्धा का आवास है, वह श्रद्धा जो आज तक निरन्तर उभरती ही रही है, धुँधली नहीं पड़ी। उसके पश्चात् स्मृति-पट पर गांधी का नाम शायद तब उभरता है जब उन्होंने किसी प्रसंग में आर्यसमाज की निन्दा की थी। तब तक मेरा सम्बन्ध आर्यसमाज से हो चुका था और मुझे याद आ रहा है कि उनके विरुद्ध एक दबा हुआ तूफान-सा उठ खड़ा हुआ था। शायद मेरे बालक मन पर भी उस तूफान का कुछ असर हुआ हो, लेकिन ऐसा स्मरण नहीं आता कि उसको लेकर कभी गांधी के प्रति मन में अश्रद्धा का जन्म हुआ हो। उसके बाद तो शायद 1927-28 से लेकर आज तक गांधी का नाम कभी भी मन से दूर नहीं हुआ ।

वह दिन भी आज मेरी स्मृति से मिटा नहीं है जब मैंने हिन्दू-मुसलमानों के जुलूस को खिलाफत के नारे लगाते हुए सुना था। और सुना था जलियाँवाला बाग के निर्माता डायर के विरुद्ध जनता का प्रसिद्ध गीत जिसमें वह सरकार से प्रार्थना करती थी कि डायर को उन्हें सौंप दिया जाए। खद्दर की पुकार लगाने वाली अनेक सभाओं में भी गया था। और याद आता है कि उन सभाओं में बराबर गांधी का नाम आता था ।

उनके सम्पर्क में आने का अवसर मुझे कभी नहीं मिला, और इस बात का मुझे हमेशा ही दु:ख रहा । सन् 1929 में जब गांधीजी ने स्वतन्त्रता की माँग की और फिर 1930 में जब नमक–सत्याग्रह का प्रारम्भ किया तब मेरी पारिवारिक स्थिति बहुत ही बिगड़ गई थी और मैं जीवनयापन के लिए एक सरकारी दफ्तर में नौकर हो चुका था। मैं खद्दर पहनता था। हिन्दी की सेवा करने का मैंने व्रत लिया था। अछूतोद्धार में मेरा सक्रिय विश्वास था और मैं हिन्दू–मुस्लिम एकता का भी प्रबल समर्थक बन चुका था। यह सब होने पर भी और यह होने पर भी कि सन् '29 से लेकर सन् 44' तक जब मैंने सरकारी नौकरी से इस्तीफा दिया, पंजाब की पुलिस बराबर मेरे पीछे लगी रही। मेरे मन में यह कसक थी कि मैं गांधी का सैनिक नहीं बन सका। मुझे याद आता है कि अपने विद्यार्थी जीवन में और उसके बाद नौकरी के प्रारम्भिक दिनों में मैं घरवालों की आँख बचाकर अखबार खरीदा करता था और बड़े चाव से गांधी के समाचार पढ़ा करता था। उन दिनों गांधी के अलावा कुछ था भी तो नहीं। तब वे सारे भारत के मन और प्राण पर छाये हुए थे। सत्याग्रह के प्रारम्भिक दिनों में अधिकांश लोग उन्हें पागल कहते थे, पर मैंने एक क्षण के लिए भी उन पर अविश्वास नहीं किया। उनकी जय में मेरा अटूट विश्वास बराबर बना रहा ।

गांधीजी के प्रत्यक्ष दर्शन करने का सौभाग्य मुझे 6 मार्च, 1931 को मिला। उन दिनों वे लॉर्ड इरविन से बातचीत कर रहे थे। 5 मार्च को उनके बीच सुलह हो चुकी थी। 6 मार्च को सवेरे 4 बजे अपने परिवार के व्यक्तियों के साथ मैं गांधीजी की प्रात:कालीन प्रार्थना में शामिल होने के लिए डॉक्टर अन्सारी की कोठी पर पहुंचा। चारों ओर धुंधलापन छाया हुआ था। एक अद्‌भुत शान्ति वातावरण में व्याप्त थी। कोठी के खुले आँगन में एक ऊँचे चबूतरे पर कठिनता से शायद 10–12 व्यक्ति उपस्थित थे। बरामदे में प्रार्थना का आयोजन किया गया। ठीक समय पर गांधीजी अपने कमरे से बाहर आये। याद पड़ता है कि मीरा बहन और महादेव देसाई उनके साथ थे। उन्होंने हमें बैठ जाने को कहा। उस छोटे– से बरामदे में हम आमने–सामने एक–दूसरे के इतने समीप बैठे थे कि एक–दूसरे को छू सकते थे। यदि मैं चित्रकार होता तो उस चित्र को हू–ब–हू आज भी खींच सकता। गांधीजी के बराबर मीरा बहन थी और मीरा बहन के पास मेरी (स्वर्गीय) माताजी बैठी थीं। मैं गांधीजी के ठीक सामने था। दूसरे लोग इधर– उधर हमारे पास बैठे हुए थे। मेरे मन में तब क्या–क्या भाव उठ रहे होंगे आज कैसे बताऊँ। डायरी में केवल इतना ही लिखा है, 'महात्मा के दर्शन, एक पवित्र दिन, प्रार्थना। भाग्यशील दिवस का अत्यन्त पवित्र एवम् सुन्दर समय।'

उस सुन्दर और पवित्र क्षण का जब भी मैं स्मरण करता हूँ तो मेरा मन एक असीम श्रद्धा से विभोर हो उठता है। पहली बार सागर को देखने पर या हिमालय के दर्शन करने पर जैसा कौतूहल, आनन्द और भय का प्रभाव मुझ पर पड़ा था और मैं गर्व से भर उठा था, कुछ–कुछ इसी प्रकार के भाव उस दिन भी मेरे मन में पैदा हुए होंगे। याद पड़ता है कि एक बार गंगा में नहाते हुए मैं उसको पैदल ही पार कर गया था । उस स्थान से जरा–सा हटकर दो हाथी डूबने जितना पानी था ।

लेकिन मेरे तो गले से नीचे ही रहा। उस समय की कल्पना की जा सकती है, कितना हर्ष और कितना भय और उस भय पर विजय पाने का कितना गौरव मन में पैदा हुआ था।

उसके बाद अनेक बार गांधीजी को देखा और समझा। समझा इसलिए कहता हूँ कि अब तो मन में एक अखण्ड श्रद्धा का साम्राज्य था। लेकिन इसके बाद वह श्रद्धा बराबर कसौटी पर कसी गयी। परीक्षा देने के कई अवसर आये लेकिन मेरी रक्षा करके ही चले गये। 15 साल तक सरकारी नौकरी करते हुए मैंने बराबर खद्दर पहना लेकिन एक बार भी अधिकारियों की ओर से मुझे चेतावनी नहीं मिली। इसके विपरीत मेरा एक अफसर जो अंग्रेज था वह अक्सर गांधीजी की प्रशंसा किया करता था। यहाँ तक कि 6 जून, सन् '40 को जबकि सारे पंजाब में सरकार–विरोधियों की तलाशी ली गयी, मेरी भी तलाशी ली गयी थी लेकिन सरकार ने मुझसे पूछा तक नहीं, बरखास्त करना तो दूर की बात

है। वैसे उन दिनों तनिक-सी बात पर, जेल में अपने रिश्तेदार से मिलने जाने पर या सत्याग्रही को घर में बुलाने पर बरखास्त कर दिया जाता था ।

उन दिनों मेरे पड़ोस में एक सज्जन रहते थे जो सन् 20-21 में गांधीजी के कहने पर सरकारी नौकरी को लात मार चुके थे। मोटे से मोटा खद्दर पहनते थे । हरिजनों को पूरे अधिकार देने के सक्रिय पक्षपाती थे और रामायण के परम भक्त थे। लेकिन जब मेरा उनसे मिलना हुआ तब वे गांधीजी के कट्टर दुश्मन बन चुके थे। जब कभी भी उनसे बात होती तो वह कड़वे विरोध के रूप में जाकर समाप्त होती। वह गांधीजी को कड़वी से कड़वी गाली देने से नहीं चूकते थे। वह उनको सदा अंग्रेजों का एजेण्ट मानते थे। बाद में वह सुभाष के पक्षपाती बन गये थे । लेकिन मैं अच्छी तरह जानता था कि उनकी घृणा उस प्रेमी की घृणा थी जो अपने प्रेम का प्रतिदान न पाकर किसी कमजोरी के कारण अपने पथ से गिर जाता है। मन की किसी गहरी परत में गांधी-भक्ति अब भी छिपी पड़ी थी। उनके साथ रहते हुए निरन्तर गांधीजी के बारे में सोचने का अवसर मिलता रहता था। यही नहीं, इस छोटे से कस्बे में विभिन्न विचारधाराओं के कार्यकर्ता अक्सर विचार-विनिमय करने के लिए आया करते थे। यह आश्चर्य की बात थी कि सब-के-सब अन्त में गांधीजी के चारों ओर घूमकर रह जाते थे। प्रशंसा और निन्दा यह दूसरी बात है। मैंने उनमें से बहुतों को, जो एक दिन गांधीजी को बुरी से बुरी गाली देने में भी नहीं चूकते थे, उनका प्रशंसक होते पाया। किसी लालच के कारण नहीं, अपने विश्वास के कारण । उस दिन मुझे कितनी खुशी होती थी यह अनुभव करके मुझे स्वयं अपने ऊपर आश्चर्य होता, क्योंकि सही मानों में मैं कभी गांधीवादी नहीं रहा। कभी कांग्रेसी नहीं रहा। फिर भी न जाने क्यों गांधी में मेरी आस्था अडिग रही। एक घटना याद आती है- जवाहरलालजी जेल से छूटकर आये थे।

नवयुवकों के नेता थे। गांधी से अक्सर उनका विरोध रहता था। तब मेरे एक दक्षिणवासी मित्र मेरे पास रहते थे, अक्सर उनसे बहस होती रहती थी। वे जवाहरलाल के पक्षपाती थे। एक दिन उन्होंने मुझसे पूछा, 'अगर दोनों में से चुनाव का अवसर आये तो तुम क्या करोगे?' तब मैंने बिना किसी झिझक के उन मित्र से कहा था, 'मैं जवाहरलाल को अपनी राय दूँगा लेकिन पीछे गांधी के ही चलूँगा।'

गांधी के प्रति मेरे मन में कितनी ममता थी इस सम्बन्ध में एक और उदाहरण याद आता है। 30 मार्च, 1935 की डायरी में मैंने लिखा है- अभी-अभी मिस्टर दत्त आये। वे कह रहे हैं कि महात्मा गांधी का स्वर्गवास हो गया । भारतमाता पर वज्रपात हुआ। हाय, आज माँ को कौन धीर बँधाएगा ! इस दशा में जब भारत की नैया मझधार में डगमगा रही है, बापूजी का चले जाना महान् दुर्घटना है। विश्वव्यापी संकट का प्रादुर्भाव है। क्या होगा कौन जानता है। हृदय में दुःख है, लिख रहा हूँ, आँसू मार्ग टटोल रहे हैं। माँ, प्यारी माँ, मुझे बता मेरा क्या कर्त्तव्य है ?गुलाम हूँ, गुलाम को दो आँसू बहाने की आज्ञा भी नहीं ?... परन्तु अभी तो विश्वास तक नहीं आता। क्या यह असत्य हो सकता है। और सौभाग्य से यह असत्य ही हुआ। ऐसे अवसर कई बार आये और उनके गलत साबित होने पर मुझे कितनी खुशी हुई उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता ।

गांधीजी के प्रति मन में अविश्वास पैदा नहीं हुआ हो या उन पर क्रोध न आया हो ऐसी बात नहीं है। ज्यों-ज्यों मैंने उन्हें समझने का प्रयत्न किया, बहुत- सी बातों में उनके विचार मुझे संकीर्ण मालूम दिखे। लेकिन जब सुभाषचन्द्र बोस के मुकाबले में पट्टाभि सीतारामैया की हार हुई और गांधीजी ने अपने वक्तव्य में कहा- 'पट्टाभि की हार मेरी हार है', तब तो सच मानिये, मुझे बहुत क्रोध आया । मुझे लगा यह व्यक्ति तो बहुत दुर्बल है। इसमें खीज है। और बहुत दिनों तक मैं अपने मन को समझा न सका। शायद यह सब इस कारण था कि मैं उन्हें बहुत ऊँचा मान बैठा था। लेकिन थे तो वे साधारण मानव ही। यह दूसरी बात है कि एक साधारण मानव कितना ऊँचा उठ सकता है इसका उदाहरण उन्होंने उपस्थित किया था। इस प्रकार के कई अवसर आये, लेकिन अन्ततः इनके द्वारा मैं गांधी को

अधिक-से-अधिक पहचानने लग गया और इसीलिए मतभेद होते रहने पर भी श्रद्धा निरन्तर बढ़ती चली गई।

उनकी प्रार्थना-सभाओं में भी अनेक बार गया हूँ। उनको प्रणाम करने या उनका स्पर्श करने का अवसर भी मुझे मिला है। कई बार मैंने डायरी में उनके रेखाचित्र लिखें हैं। उनके प्रत्येक अंग और भाव-भंगिमा को परखने का प्रयत्न किया है और जहाँ तक याद कर सकता हूँ सब मिलाकर उनका प्रभाव सुख देने वाला हुआ है।

सन् 40 से लेकर 42 तक के तूफानी दिनों की बात है। उनका बहुत विरोध हो रहा था। राजाजी भी उनके विरोध में चले गये थे। तब मेरी सहानुभूति राजाजी के साथ थी। मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की मांग पर मैं पूर्ण रूप से राजाजी के साथ था। लेकिन जब सर स्टेफर्ड क्रिप्स ने जुलाई, सन् 42 में अमेरिका को ब्रॉडकास्ट करते हुए गांधीजी को बुरा-भला कहा तो मैं बौखला उठा। उस दिन की डायरी में लिखा हुआ है, 'यह ब्रॉडकास्ट भाषण पढ़कर मैं काँप उठा । सोचा, दुनिया में इन्सानियत नहीं रही। गांधी से हमारा विरोध हो सकता है, परन्तु उसकी ईमानदारी पर संदेह करना नीचता है। इस ब्रॉडकास्ट भाषण में उसी नीचता का ओछापन है...।'

हरिजनों के लिए जब-जब गांधीजी ने आवाज उठाई तब-तब मैंने उसमें अपना यत्किंचित् सक्रिय सहयोग देने का प्रयत्न किया। पूना पैक्ट के समय तो उनके प्रबल विरोधी को मैंने उनकी प्रशंसा करते पाया था। मैंने भी कभी-कभी सहानुभूति में उनके साथ व्रत किया और मैं यह कह सकता हूँ कि हरिजनों के प्रति किसी भी तरह का भेदभाव करने की बात मेरे मन में कभी नहीं उठी । राष्ट्रभाषा को लेकर भी मैं सदा उनके साथ रहा। लेकिन सुन्दरलालजी वाली हिन्दुस्तानी का मैं कभी समर्थक नहीं बन सका। शराब-बन्दी को लेकर मैंने उन्हें पत्र भी लिखा था। उनकी ओर से कड़ा उत्तर भी मिला था, पर मैं आज भी उतना कड़ा नहीं हो पा रहा। दो पत्र और लिखे थे। उत्तर भी मिले थे पर दुर्भाग्य से वे कहीं खो गये। उनको लेकर अनेक बार

हँसने रोने के अवसर आये, लेकिन 46-47 के उन रोमांचकारी दिनों में उनके प्रति मेरे मन में जितनी वेदना जागी, जितनी श्रद्धा पनपी, उतनी शायद कभी नहीं पनपी। अक्सर उनकी बात सोचते- सोचते आँखों में आँसू आ जाते थे। और आज जो कांग्रेस में अनेक बड़े नेता बने हुए हैं उनके लिए मन में घृणा पैदा होती थी क्योंकि मत-स्वातन्त्र्य के नाम पर उन राष्ट्रवादी नेताओं ने उस समय गांधी का विरोध किया था जब कि वह महा-मानव नोआखाली में अपने प्राणों की आहुति देने के लिए आत्म-बलिदान यज्ञ का आयोजन कर रहा था। मैं गोडसे को नहीं, बल्कि उन महान् नेताओं को गांधी का हत्यारा मानता हूँ।

उन दिनों गांधी मेरे लिए मानव नहीं रह गये थे, वे भगवान रूप थे। उनकी प्रार्थना-सभाओं में जाना ही मैं तीर्थयात्रा के समान समझता था। इसलिए नहीं कि मैं उन जैसा विश्वासी था लेकिन उस विश्वास को देने की लालसा मुझे खींचती रहती थी। प्रतिदिन तो नहीं जा पाता था, लेकिन कभी-कभी जाता था और 30 जनवरी, 1948 को मुझे उनकी प्रार्थना में जाना था। लेकिन ऐसा हुआ कि 26 जनवरी को जब मैं रेडियो स्टेशन पहुँचा तो हमारे यायावर मित्र देवेन्द्र सत्यार्थी और रेडियो के दूसरे अधिकारी वहाँ जाने को तैयार खड़े थे। मैं उनके साथ चल पड़ा। उस दिन मैंने विशेष रूप से गांधीजी की आकृति और भावभंगी का अच्छी तरह अध्ययन किया। अब भी याद है कि मुझे ऐसा लगा था जैसे उनके चारों ओर दिव्य प्रकाश हो। अक्सर अपनी डायरी में मैंने उनके नाक और कानों को काफी बड़ा लिखा है लेकिन उस दिन उनका सिर विशेष रूप से बड़ा जान पड़ा। उनके भाषण में उस दिन मार्मिक वेदना भरी हुई थी। वह प्रत्येक शब्द में अपने अन्तर की पीड़ा को प्रकट कर रहे थे। उन्होंने बड़े दर्द-भरे शब्दों में इस बात का जिक्र किया कि लोग मुझसे हिमालय चले जाने को कहते हैं। लेकिन फिर भी उनका मुख मुझे विशेष रूप से आभामय जान पड़ा था और मैं एक क्षण के लिए भी यह कल्पना नहीं कर सकता था कि अब इस महामानव के इस रूप में दर्शन नहीं होंगे। प्रार्थना के अन्त में सत्यार्थीजी ने कहा, 'आओ, गांधीजी से दो बातें करनी हैं।' लेकिन मैंने कहा, 'मैं व्यर्थ उन्हें परेशान नहीं करना चाहता। आप ही बात कर लें।' इस प्रकार उनसे प्रत्यक्ष बात कर लेने का अन्तिम अवसर भी खो दिया। मैं बात करता भी क्या? बस, उन्हें देखता रहता। वह मैं तब भी करता रहा। वह दो व्यक्तियों के कन्धों पर हाथ रखे आगे बढ़ गये। भीड़ पीछे चली। सत्यार्थीजी और मैं दोनों कुछ दूर तक साथ चलते और बातें करते रहे। मैं कुछ पीछे था। सत्यार्थीजी हँस रहे थे। मेरी ओर मुड़कर कहने लगे- बड़े अद्‌भुत हैं गांधीजी। मैंने उनके वर्धा जाने की चर्चा सुनी थी और मुझे पुस्तक की भूमिका लिखानी थी। उनसे कहा तो बोले- 'कौन-सा गांधी वर्धा जा रहा है। मैंने तो नहीं सुना। फिर गया भी तो मर तो नहीं जायेगा, लौटकर यहीं आयेगा। प्यारे- लाल से कह देना, लिख दूंगा।' हम खूब हँसे पर नियति भी हँस रही थी- गांधी कल जायेगा और फिर लौटेगा नहीं।

और सचमुच 30 जनवरी को एक साधारण मानव ने अपने हाथों अपने ही उस महामानव की हत्या की।

लेकिन उस दिन की और अगले दिन की क्या चर्चा की जाये। क्या वर्णन किया जाये- उनकी अन्तिम यात्रा का? हम इसी निश्चय पर पहुँचे थे कि एक महामानव का इससे सुन्दर अन्त नहीं हो सकता। शायद वे जीते-जी इतना कुछ नहीं कर पाते जितना वे अपने प्राणों का दान करके कर गये। यह दूसरी बात है कि हमारे देशवासियों ने उनके बलिदान के महत्त्व को पूरी तरह नहीं समझा। लेकिन मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि एक दिन लोग उनको समझेंगे। किसी की प्रत्येक बात को मान लेना ही उसको मानना नहीं होता, बल्कि उसकी मान्यताओं और भावनाओं को समझकर अपना पथ निर्माण करना यही किसी महापुरुष का समुचित सम्मान है।

वह और दिनों की भाँति एक साधारण दिन था। सदा की तरह शिशिर की संध्या, धीरे-धीरे काँपती, सिहरती विश्व की लीलाभूमि में प्रवेश कर रही थी

और मैं लिखने में तन्मय था। जैसा कि सदा होता था, मेरा भाई दफ्तर से लौट आया और उसने रेडियो चला दिया। मैंने दृष्टि उठाकर एक बार रेडियो की ओर देखा और फिर लिखने लगा। लेख समाप्त होने वाला था। मैं नहीं जानता था कि रेडियो क्या बोल रहा है। तभी एक अभ्यागत मित्र ने आकर कहा, 'मैं जा रहा हूँ।'

मैंने लेख का अन्तिम वाक्य लिखा लिया था। मैं मुस्कराया, 'आज नहीं जा सकेंगे। गाड़ी नहीं मिलेगी।'

और मैंने घड़ी की ओर देखा, छः बजने वाले थे।

मित्र ने कहा, 'मुझे जाने दीजिए। रुकने से मेरी हानि होगी। मैं किसी तरह गाड़ी पकड़ लूँगा।'

"नहीं।'' मैं बोला ।

तभी सहसा उन्होंने काँपकर रेडियो की ओर देखा। वहाँ से एक स्वर उठ रहा था, 'हिट इन दी चेस्ट एण्ड कौलैप्स्ड..।'

कि मेरा भाई करुण स्वर में बोल उठा, 'यह क्या हुआ ?'

"क्या... क्या हुआ,'' मैंने कलम फेंक दी। कापी दूर जा पड़ी। मैं हड़बड़ाकर उठा, 'क्या क्या हुआ?'

"गांधीजी।'' भाई का स्वर रुँध गया। रेडियो से वेदना का स्वर गूंज रहा था। पागलों की तरह मेरी माँ और दूसरे लोग कमरे में दौड़ते हुए आये, 'क्या ... क्या हुआ गांधीजी को' कि रेडियो फिर बोला, 'हमें बड़े दुख के साथ सूचित करना पड़ता है कि पाँच बजे के कुछ पश्चात् गांधीजी का स्वर्गवास हो गया। वह सदा की तरह प्रार्थना सभा में जा रहे थे कि एक व्यक्ति ने तीन या चार बार उन पर पिस्तौल से गोली चलाई। गोली छाती में लगी और वे बेहोश हो गये। ईश्वर की इच्छा!'

जैसे शेषनाग ने पृथ्वी को पटक दिया, जैसे सागर मर्यादा को छोड़कर उमड़ पड़े, जैसे विश्व के समस्त ज्वालामुखी एक साथ भभक उठे, जैसे उनचास पवन एक साथ इन्द्र के बन्धन से मुक्त हो गये किसी को कुछ नहीं सूझा। मस्तिष्क की गति कालगति से तीव्र हो उठी। अर्द्ध-विक्षिप्त सबने एक-दूसरे को देखा। देखते रह गये-यह क्या हुआ! गांधीजी मर गये-नहीं, नहीं.. पर रेडियो कहता है कि उन पर गोली चलाई गई उनकी हत्या की गयी गांधीजी की हत्या, असम्भव नितान्त असम्भव पर रेडियो फिर कह रहा था..।

मित्र पागलों की तरह बाहर भागते चले गये। एक छोटी बच्ची सकपकाकर दीवार से चिपक गई। रसोई में पुकार मची, 'बन्द कर दो।'

"गांधीजी गांधीजी..!'' कमरे में भीड़ बढ़ने लगी। सब विमूढ़-से रेडियो की ओर देख रहे थे और मैं रो रहा था। पर वे अभी रोने के लिए तैयार नहीं थे। सहसा मैंने उत्तेजित होकर कहा, 'अब प्रलय होगी।'

"पर उन्हें किसने मारा?'' एक रुदन से पूर्ण स्वर उठा ।

किसी ने कुछ जवाब नहीं दिया। रेडियो फिर उसी समाचार को दोहरा रहा था। सहसा फिर किसी ने कहा, 'उन्हें मारने वाला मुसलमान तो नहीं है।'

मैंने उस व्यक्ति को देखा, फिर दृढ़ता से उत्तर दिया, 'यह असम्भव है।'

"तो वह पंजाबी है, वह अवश्य पंजाबी है।''

"पर उसने गांधीजी को मारा क्यों? क्यों क्यों क्यों आखिर?''

"शायद यह गलत है। उन्हें कोई नहीं मार सकता। कोई नहीं लेकिन रेडियो वह अंग्रेजी में बोलता है हिन्दी में बोलता है। ईश्वर की इच्छा... ईश्वर की इच्छा ईश्वर! ईश्वर, क्या तुम हो?क्या यह सब तुम्हारी इच्छा है?''

बाहर से एक और भाई आये और धम्म से कुर्सी पर बैठकर उन्होंने एक साँस में कहा, 'गांधीजी को मारने वाला कोई हिन्दू था।'

"हिन्दू !'' जैसे समूचा विश्व घृणा से फुसफुसा उठा। 'हाँ, हिन्दू और मराठा।' उन बन्धु ने यन्त्र की तरह कहा और मौन हो गये। उनका कण्ठ रुध गया। उन्होंने अपना सिर कुर्सी की पीठ पर डाल दिया। वह

रो रहे थे...।

तभी एक और भाई आये और हांफते हांफते बोले, 'उसका नाम नाथूराम है।'

"नाथूराम...!''

"तो वह मराठा नहीं है।''

नवागन्तुक पंजाबी थे। करुण स्वर में उन्होंने कहा, 'अब क्या होगा ?'

"अब कत्लेआम होगा,'' किसी ने क्रुद्ध होकर उत्तर दिया, ''रात-रात में पंजाबियों का बीज मिटा दिया जाएगा।''

उनके प्राण लौट रहे हैं। बोल, रेडियो, बोल! भगवान् तुम ही इसमें से बोल उठो गांधी जी रहा है, गांधी अमर है-कि रेडियो बोला- मैंने नेत्र मूंद लिये, आँसू धरती पर टपकने लगे । भाई ने उठकर सुई बड़ौदा की ओर घुमा दी थी। वह आर्त स्वर में पुकार रहा था- बापूजी, गांधीजी, बापूजी, महात्मा, बापूजी... बापूजी अब नहीं रहे। प्रार्थना में जाते समय...। वही कहानी, वही स्वर, वही आकाश, वही धरती, वही संध्या, वही जगत, पर बापू कहाँ हैं..?

"हाय!'' मेरा हृदय रो उठा, 'शान्ति के देवता का यह अन्त !'

तब तक सब रोने लगे थे। उस रुदन में स्वर नहीं था, इसलिए पीड़ा थी और वह पीड़ा बढ़ई के बरमे की तरह आत्मा को छील रही थी कि माँ भर्राये स्वर में फुसफुसाई, 'हाय ! किसी ने यह क्या किया!' कि एक बच्चे ने पूछा, 'महात्माजी को क्या हुआ ?'

कि मेरे मन में एक विचार उठा मानो रेडियो कह रहा है, 'अब आप एक शुभ समाचार सुनिए, डॉक्टर गांधीजी की बेहोशी दूर करने में समर्थ हुए हैं। उनके प्राण लौट रहे हैं।'

उनके प्राण लौट रहे हैं। बोल, रेडियो, बोल! भगवान् तुम ही इसमें से बोल उठो गांधी जी रहा है, गांधी अमर है-कि रेडियो बोला- मैंने नेत्र मूंद लिये, आँसू धरती पर टपकने लगे । भाई ने उठकर सुई बड़ौदा की ओर घुमा दी थी। वह आर्त स्वर में पुकार रहा था- बापूजी, गांधीजी, बापूजी, महात्मा, बापूजी... बापूजी अब नहीं रहे। प्रार्थना में जाते समय...।

वही कहानी, वही स्वर, वही आकाश, वही धरती, वही संध्या, वही जगत, पर बापू कहाँ हैं..?

बापू कहाँ हैं?- मैं सुबक उठा। उसने अपना सिर पर्लग के तकिये पर टिका दिया। स्वर लाहौर जा पहुँचा। वहाँ शोक का गहरा गान न जाने किस भाषा में रुदन कर रहा था पर वह स्वर-वह दिल के टुकड़े-टुकड़े किये दे रहा था...।

ढाका !

वही एक भीगा स्वर । वही एक मर्मस्पर्शी रुदन ।

पटना !

गायक बापू के गीत गाता है और रोता है।

बड़ौदा !

अरे, बापू बोल रहे हैं..!

अरे, बापू बोल रहे हैं ! कमरे में एक मर्मर ध्वनि उठी। सबने एक-दूसरे को देखा, दृष्टि मिली और झुक गई। रिकॉर्ड बज रहा था- गांधी अमर पट्टा लिवाकर थोड़े ही आया है। वह भी मरेगा, एक दिन सब मरेंगे !

हाय, उनके मुख से अब यह स्वर फिर नहीं निकलेगा !

क्यों नहीं निकलेगा? बापू की प्रार्थना होगी। हम सदा की तरह उनकी प्रार्थना में चलेंगे। छोटा बच्चा उन्हें देखकर कहेगा- बापू की जय! और कल ही तो मैं उनकी प्रार्थना में गया था। वह कितने सुन्दर, प्रिय और स्वस्थ लगते थे। लोग ठीक कहते हैं कि बुड्ढा आयु बढ़ाने के लिए व्रत रखता है। उपवास से ग्रन्थियों को नष्ट करने वाले तत्त्व का क्षय होता है न?वह कह रहे थे, 'मैं तो इस अशान्ति में से शान्ति खोजना चाहता हूँ। नहीं, इसी अशान्ति में मिट जाना चाहता हूँ...।' और वह मिट गये।

मैं चौंका। मैंने जोर से गरदन को झटका दिया। एक बार कमरे में दृष्टि डाली। पता लगा – बापू अब नहीं हैं। उन्हें आज पाँच बजे जब वह प्रार्थना–सभा में जा रहे थे, किसी हिन्दू युवक ने पिस्तौल से गोली चलाकर मार डाला, बापू को मार डाला – मैं फिर सिहर उठा–असम्भव। सर्वथा असम्भव। बापू को कोई कैसे मार सकता है? कैसे भला? उनका वक्षस्थल सदा खुला रहता है। खुले वक्षस्थल पर कोई चोट नहीं कर सकता।

कि मैं चौंका। पंजाबी बन्धु भागे–भागे आये और बोले, 'वह मराठा है। उसका नाम नाथूराम विनायक गोडसे है। वह पूना का रहने वाला है।'

"पंजाबी बच गये !''

पंजाबी बन्धु ने साँस खींची, 'पंजाबी इतना नीच नहीं है।'

"नीच, कमीने, घृणित,'' एक और बन्धु अन्दर आ रहे थे। उनकी आँखें लाल हो रही थीं। वह काँप रहे थे। उन्होंने कहा, 'वे पापी हैं।'

"कौन ?'

"वे जो मिठाई खा रहे हैं।''

जैसे वज्र टूटा, 'क्या..?'

"चौक में दो व्यक्ति रसगुल्ले खा रहे हैं।''

"हाय ! ऐसे आदमी भी हैं !''

किसी ने काँपते हुए करुण स्वर में कहा, 'पर उन्हें मारा ही क्यों? वह तो किसी का बुरा नहीं चाहते थे।'

"इसीलिए तो मारा !''

"इसीलिए,'' पूछने वाले ने अचरज से कहा और चुप हो गया। वे सब इसी तरह बीच–बीच में बोल उठते थे और फिर चुप होकर रेडियो की ओर देखने लगते थे। वे शोक–विह्वल थे। उनकी वाणी उनके विचारों को वहन करने में असमर्थ थी परन्तु उनकी आँखें, उनकी मुद्रा, उनका दिल, वे फूट–फूटकर विलाप कर रहे थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था– गांधीजी को क्यों मारा गया? क्यों आखिर..? लेकिन युग–युग से क्या मानव ने यही प्रश्न नहीं पूछा है–कृष्ण को अज्ञात नाम के शिकारी ने क्यों मारा था? क्यों तत्त्वज्ञानी सुकरात को विष का प्याला पिलाया गया? क्यों ईसा को सूली पर चढ़ना पड़ा? क्यों लिंकन को गोली से उड़ा दिया था? क्यों ऐसे ही और अनेक महापुरुषों की हत्या की गई? क्यों क्योंकि वे किसी का बुरा नहीं चाहते थे...!

यह कैसा अन्त? यह कैसी कृतघ्नता? यह कैसा विधान? क्या है यह संसार–जाल? क्या है यह नियति–चक्र? क्या है स्वयं नियति? क्या जगत् ने अपने आरम्भ से आज तक तनिक भी प्रगति नहीं की? प्रगति–वह फुसफुसाया–धरती गोल है। सब कुछ गोल है। आदि और अन्त एक ही चरम बिन्दु के नाम हैं।

तो सब शोक वृथा है! सब मोहजाल है! सब ढ़ोंग है, ढ़ोंग! एक वीभत्स डोंग।

मेरी करुणा क्रुद्ध हो उठी। नयनों का जल अंगार की तरह दहकने लगा। उसे लगा–तूफान के प्रज्वलित शोलों की तरह यह सारा संसार भस्म हो उठेगा, पर मैं न काँपा, न सिहरा, बल्कि मैंने दृढ़ता से कहा, 'जिस संसार में गांधी की हत्या हो सकती है उसके अस्तित्व की कोई आवश्यकता नहीं। उसे नष्ट होना ही चाहिए।' मैं फिर उत्तेजित होने लगा लेकिन किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। एक गहरा सन्नाटा कमरे में भर उठा और लाहौर रेडियो स्टेशन से एक गहन गम्भीर स्वर, जिसके कण–कण में वेदनामय रुदन मूर्तिमान था, धीरे–धीरे चारों ओर फैलने लगा–

ऐ कौम अब न छूटेगा दामन से तेरे दाग,
गुल तूने अपने हाथ से अपना किया चिराग।
गांधी को कत्ल करके वो तोड़ा है तूने फूल,
तरसेगा लहलहाने को अब एशिया का बाग।

मेरा दिल चीत्कार कर उठा। मैंने दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया पर मैं अकेला नहीं था। कमरे

का प्रत्येक व्यक्ति रो रहा था और बच्चे ठगे–सकपकाये देख रहे थे आखिर आज क्या है? शायद उसी प्रश्न के उत्तर में कवि ने तड़प–कर कहा–

गला घोंटा गया जिस सरजमीं पर आदमीयत का,
वो तरसेगा हमेशा के लिए अब नामे इन्सां को।

इन्सान – मैंने आँसुओं को पीने का भीष्म प्रयत्न किया। मुझे कुछ याद आ गया। कहते हैं– ईसा एक ही था जिसे सूली पर चढ़ा दिया गया। मैंने कहा– मैं कहता हूँ कि इन्सान एक ही था और उसे गोली मार दी गयी। जैसे मुझे ठीक करता हुआ गायक का दर्द–भरा करुण स्वर फिर उठा–

किया कत्ल गांधी से मोहसिन को तुमने बताओ तो मोहसिन कुशी की भी हद है।

एक बन्धु रोते–रोते बोले, 'इसमें शक नहीं गांधी को हमने कत्ल किया है।'

"हाँ, हमने ही किया है।'' दूसरा स्वर उठा ।

तीसरे ने कहा, 'हम चाहते तो उन्हें बचा सकते थे।'

माँ बोलीं, 'क्या वहाँ पुलिस नहीं थी? उस दिन किसी मेटगये ने बम भी तो फेंका था ।'

एक पड़ोसी, जो अब तक चुप बैठे थे, दर्दभरे स्वर में बोले, 'वह अहिंसा के उपासक थे। वह पुलिस को कैसे अपनी रक्षा करने देते।'

और उन्हीं को मार डाला! मारकर क्या लिया उसने !

कैसी अजीब बात है जो जीवन–भर अहिंसा की उपासना करता रहा, उसका अन्त हिंसा से हुआ। लेकिन वह क्षण–भर रुककर बोले, 'क्या वह अन्त सिद्ध नहीं करता कि हिंसा एक बहुत बुरी वस्तु है?'

बेशक हिंसा पाप है।

और मरते–मरते भी बापू उस पाप को प्रमाणित कर गये। बापू सचमुच महान् थे। और उसी महान् को हमने गोली से गिरा दिया।

कमरे में फिर सन्नाटा छाने लगा। रेडियो राम–धुन अलाप रहा था–

"ईश्वर अल्लाह तेरे नाम ।

सबको सन्मति दे भगवान् !''

और मैं फिर ध्यानावस्थित हो चला था। बापू जानते थे कि उनके प्राण संकट में हैं पर उन्हें प्राणों का मोह नहीं था। वे भगवान् के हाथ में थे। उन्होंने बार–बार कहा था–प्रार्थना–सभा में कोई मुझे मारना चाहता है तो मार दे। लिंकन को भी ऐसी ही चेतावनी दी गई थी। उसने उत्तर दिया था–शान्ति का युग आरम्भ हो गया है, मुझे कौन मारेगा ?

लेकिन बूथ ने उन्हें मार डाला। नहीं, बूथ ने उन्हें अमर कर दिया । पाइलेट ने ईसा को अमरत्व की वेदी पर आसीन किया ।

विष पीकर सुकरात अमर हो गये ।

इन्हीं महापुरुषों की वन्दना में कवि ठाकुर ने गाया है–

भगवान् तुमने युग–युग में बार–बार अपने दूत भेजे,
इस दयाहीन संसार में–वे कह गये सबको क्षमा
करो, कह गये सबको प्यार करो,
अन्तर के विद्वेष का विष निकाल दो।

वे वरण करने योग्य थे, वे स्मरण करने योग्य थे,
परन्तु हमने इस दुर्दिन में भी उन्हें घर के द्वार से
ही कोरा नमस्कार करके लौटा दिया।

हाय! आज कवि ठाकुर होते तो अपने हृदय के रक्त में लेखनी डुबोकर वे गीत की अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार लिखते।

परन्तु हमने इस दुर्दिन में भी, अपने ही घर के द्वार पर उन्हें गोली से मार–कर गिरा दिया।

मस्तिष्क तेजी से भर्राया– गांधीजी को गोली मार दी! गांधीजी को... नहीं–नहीं यह मैं क्या सोच गया?गांधीजी को भी कोई मार सकता है? उनके हृदय

में तो भारत बसता है। सारी मानवता बसती है। क्या कोई मानवता को मार सकता है?

तभी देखा, मित्र लौट आये हैं और उनका चेहरा पीला पड़ गया है।

"क्या हुआ तुम्हें?'' मैंने उनसे पूछा ।

"क्या बात है?'' दूसरे बन्धु बोले ।

मित्र एकटक देखते ही रह गये ।

मैं दुनिया में लौटने लगा। पूछा, 'आप बिड़ला भवन गये थे ?'

"हाँ..''

"तो गांधीजी...''

"गांधीजी उसी तरह शान्त निर्द्वन्द्व लेटे हैं। उनके मुख पर पूर्णत: दया और क्षमा के भाव हैं।''

भावना ने एक बार फिर सबको तड़पा दिया। आँसू बाँध तोड़कर बह चले। भर्राये गले से एक बन्धु बोले, 'वे योगी थे। उन्होंने उसी क्षण समाधि लगा ली होगी।'

"जी हाँ।'' मित्र बोले, 'वे समाधि में थे। गोली लगते ही उन्होंने 'हे राम' कहा और प्राण त्याग दिये ।'

माँ बोलीं, 'तनिक भी नहीं तड़पे ! कैसी मौत पाई है !'

और फिर वे सब शान्त हो गये। पास के कमरे में भी निस्तब्धता छा गयी। रसोईघर उसी तरह अस्त-व्यस्त पड़ा रहा और वह लड़की उसी तरह दीवार से चिपकी खड़ी रही। उसके बाप ने कहा, 'इसने खाना खाने से इनकार कर दिया है।'

किसी ने कुछ जवाब नहीं दिया। लाहौर से कोई व्यथित स्वर में गांधीजी के गुण गा रहा था, 'वे संसार के श्रेष्ठ मानव थे। वे सत्य, अहिंसा और प्रेम के पुजारी थे...।'

तभी बहुत देर से तन्मय-तल्लीन एक बन्धु गम्भीरता से बोले, 'मैं कहता हूँ, हम गांधीजी के लिए शोक क्यों करें? वे सैनिक थे और सैनिक की भाँति उन्होंने छाती पर गोली मारकर वीरगति प्राप्त की। उन्होंने अपने जीवन में अपने स्वप्नों को फलते देखा। उन्होंने कोटि-कोटि मानव-समुदाय को एक राष्ट्र में गूँथा। वे अछूतों के त्राता थे और स्त्रियों के मार्ग-प्रदर्शक। वे किसानों के मित्र थे और मजदूरों के बन्धु। वे गृहस्थियों के सलाहकार थे और संन्यासियों के आदर्श । वे सबसे बड़े साम्यवादी थे। वे धर्म की मूर्ति थे। वे साहित्य को जीते थे। सत्य उनकी धमनियों का रक्त था और अहिंसा उनका प्राण। उनकी क्रान्ति शान्त थी, उनका विद्रोह मधुर था। उन्होंने राजनीति के दूषित वातावरण में मानवता की प्राण-प्रतिष्ठा की थी। उनके अन्तर में विरोधी तत्त्वों का अद्‌भुत सम्मिश्रण था। फिर भी वे महान् थे, क्योंकि वे मानव थे।'

मैंने प्रभावित होकर धीरे से कहा, 'वे महामानव थे।'

"और उसी महामानव के लिए तुम रोते हो ! वे महान् थे; उनका अन्त भी उतना ही महान् है। क्या आज तक किसी ने ऐसी मृत्यु पाई है?क्या कोई गांधी की तरह अपने जीवन में सफल हुआ है?क्या कोई इन्सान जीते-जी ईश्वर बना है?और क्या...?'

सहसा उनका गला रुँध गया। उन्होंने किसी तरह अपना वाक्य पूरा किया, 'और क्या क्या किसी युग में इन्सान ने ईश्वर को गोली मारी है ?' और फिर आगे बोलने में असमर्थ उन्होंने आँखें मीच लीं।

कमरे का गहन सन्नाटा एक बार फिर बह चला। एक बार फिर आँसुओं का बाँध टूट गया।

प्रस्तुति- अतुल प्रभाकर

याद आती हैं बापू की बुझती हुई आँखें

वरिष्ठ पत्रकार रहे देवदत्त भारत विभाजन के समय लाहौर में पढ़ाई कर रहे थे। जब वहाँ सांप्रदायिक हिंसा भड़की, तब वे दिल्ली आ गये। दिल्ली में शरणार्थियों के कैम्प में वे रह रहे थे, जहां से प्रतिदिन पैदल चलकर बिरला हाउस में गाँधी जी की प्रार्थना सभा में वे आते थे। 30 जनवरी 1948 की शाम जब गाँधी जी की हत्या हुई, उस समय देवदत्त बिरला हाउस में ही मौजूद थे। गांधी की हत्या की घटना उन्होंने अपनी आँखों से देखी थी और इस घटना को उन्होंने अपनी डायरी में दर्ज किया। डायरी के इस हिस्से को 'अंतिम जन' में पुन: प्रकाशित कर रहे हैं।

आज, दुनिया की एक बहुत दर्दनाक और ऐतिहासिक बात लिखने लगा हूँ। आज अपने जीवन की एक बहुत महत्वपूर्ण घटना का विवरण लिखने बैठा हूँ। शुक्रवार को एक अनहोनी बात हुई। शाम के पाँच बजे मैं बापू की प्रार्थना पर गया। पिछले दिनों से श्रोतागण अधिक थे। बापू के बैठने का तख्तपोश बाहर मैदान पर सजा हुआ था। अभी बापू आए नहीं थे। भिन्न-भिन्न स्तरों के व्यक्ति वहाँ बैठे थे। पहले की तरह मैं इस विभिन्नता को देख कर चकित हो रहा था और सोच रहा था कि 'यह कितना अद्भुत व्यक्ति है जो कि इतनी विभिन्नता-मिलिट्री के सिपाही से लेकर एक आध्यात्मिक पुरुष तक-को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।' उन लोगों की आँखों में विस्मय, श्रद्धा, और कौतुक का एक अजीब मिश्रण मैंने उस दिन भी देखा।

हाँ, आदत के मुताबिक मैं भी उस पंक्ति में खड़ा हो गया जो कि चबूतरे पर चढ़ती सीढ़ियों के पास से (भक्तों की) शुरू हो जाती हैं, जब बापू प्रार्थना स्थान पर आते थे। सिहरन उठी, हलचल हुई, उत्सुकता चेहरों पर दौड़ गई। श्रद्धा भाव ने उसका स्थान लिया। 'बापू आ रहे हैं' क्षण भर में मैंने उन्हें सीढ़ियों पर चढ़ते देखा। बस वही पुरानी जोड़ी। आभा और मनु पर हाथ धरे हुए, चेहरा हंसी से ढंका हुआ, प्रसन्न था। आखिरी सीढ़ी पर चढ़ कर उन्होंने लोगों को प्रणाम किया। सिर झुक गए, आँखें नम हो गई, हाथ उठ गए। बापू आ रहे हैं। मैं एकटक देखता ही रहा उस हास्यमयी मूर्ति को। कितना

श्रद्धा भाव ने उसका स्थान लिया। 'बापू आ रहे हैं' क्षण भर में मैंने उन्हें सीढ़ियों पर चढ़ते देखा। बस वही पुरानी जोड़ी। आभा और मनु पर हाथ धरे हुए, चेहरा हंसी से ढंका हुआ, प्रसन्न था। आखिरी सीढ़ी पर चढ़ कर उन्होंने लोगों को प्रणाम किया। सिर झुक गए, आँखें नम हो गई, हाथ उठ गए। बापू आ रहे हैं। मैं एकटक देखता ही रहा उस हास्यमयी मूर्ति को। कितना आलोकपूर्ण, सुनहरी धूप-सा स्वच्छ हास्य, उनके चेहरे पर खिल रहा था, तरंगित हो रहा था।

आलोकपूर्ण, सुनहरी धूप-सा स्वच्छ हास्य, उनके चेहरे पर खिल रहा था, तरंगित हो रहा था। सहसा, उस पंक्ति से मुझसे लगभग दो गज के फासले पर एक आदमी बाहर निकला और बापू की तरफ बढ़ा। हमने समझा कि वह पांव छूने लगा है। लेकिन क्षणभर में, वह प्रशांत वातावरण, वह शाम का निरभ्र आसमान, पटाके बजने की आवाज से गूंज उठा। वह हंसता हुआ चेहरा उदास हो गया, मानो सूर्य पर सहसा धुंध उतर आई हो। पल भर में मुझे मालूम हुआ कि किसी ने हाथ-बम फेंका होगा। मेरी चेतनी प्रस्तर-सी निर्विकार हो गई। सूझ न पाया। मैं बापू की उस धुंधली, गंभीर आकृति को देखता रहा- यह सब क्षणभर में ही हो गया। और दूसरे क्षण... हाहाकर मच गया। बापू जमीन पर गिर गए। आभा और मनु की हृदय विदारक चीत्कार 'हाय बापू' से संध्या गूंज उठी। मेरे पांव कांप रहे थे। मेरी चेतना न मालूम कहां गई। मैं हक्का-बक्का किंकर्तव्य विमूढ़-सा, देखता, भागता ही रह गया। विवेचन शक्ति जाती रही। मैं कातिल की तरफ भागा। लोग उसे पकड़े हुए थे और पीट रहे थे। मैं बापू की तरफ दौड़ा जिनके पास और कोई नहीं था।

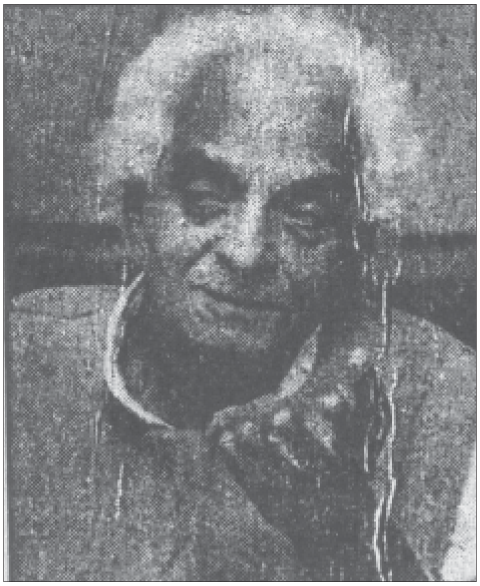

आँख का चश्मा उतर कर कहीं गिर पड़ा था। आभा की गोद में उनका सिर था। उनके हाथ छाती पर जुड़े हुए थे। आँखें- उन आँखों को देख कर और याद करके, मैं अजीब भावुकता से पिघल उठता हूँ। वे आँखें और चेहरा- बुझती हुई वे आँखें, उनका तिल-तिल क्षीण होता हुआ प्रकाश, और पुतलियाँ ऊपर पलकों में छिपती जा रही थीं। दाहिनी आँख की पुतली अभी बाहर थी। बाई आँख बंद होती जा रही थी। एक अजीब प्रकार का रंग उन आँखों में उतर आया था-कुछ नीलापन, कुछ पीलापन-और उन दोनों आँखों की वजह से शक्ल, बगैर चश्मे के, और भी अजीब हो गई थी। हाँ, वे बुझती हुई आँखें जिनमें क्षमा और वेदना साकार होकर उतर आई थी वे आँखें मुझे रह- रह कर याद आती हैं। और वह चेहरा। होंठ, वेदना की एक करुणाजनक ऐठन लिए हुए थे- सामने बढ़े हुए, दबे हुए, बंद। न मालूम वह बुझती आँखें क्या देख रही थीं, किसे देख रहीं थीं- स्थिर सी, अधखुली सी।

उनके पेट पर का कपड़ा खून से लाल था, उनकी एक लात सीधी थी और दूसरी लात घुटने पर मुड़ी हुई।

बस, बापू जमीन पर इस तरह पड़े थे। खून से लथपथ, बुझती आँखें, वेदना की ऐठन, सिर आभा की गोद में, हाथ जुड़े हुए, तिरझे तौर पर व्यथित, रोदन करते हुए, चीत्कारों से अलुप्त, मानवों से घिरा हुआ।

मुझे मालूम नहीं मैंने और क्या-क्या देखा। एक आवेश उठा। जल्दी से मैंने उनके कोमल, ठंडे पैरों पर अपना सिर झुका दिया। हाथ जोड़ दिए। मैं उनकी चरण रज ले रहा था- यंत्रवत, प्रस्तर-सा किंकर्तव्यविमूढ़... जनता का हाहाकार मैं सुनता तो था। लेकिन सिर्फ आवाजें थीं, वह चीत्कारें मेरे लिए। पांव, टांगें कांप रही थीं। आँखें देख की थी पर भेद करने की ताकत दिमाग की जाती रहीं। बस एकटक देखती ही थीं...।

मैं मारने वाले की तरफ मुड़ा। सामने जा कर देखा। उसका सिर रक्त से लथपथ माथे पर रक्त चू कर आँखों की पलके भिगो रहा था। दोनों तरफ से पुलिस ने उसकी बाहें पकड़ी हुई थीं। वह सामने की तरफ झुका हुआ था, उसकी तेज नाक, मुड़ा हुआ सिर, आँखें खून से लथपथ, मौन, निश्चत, चमकती आँखें...

लोग बापू को उठा ले गए। उस मैदान में मैं निश्चल खड़ा था। भीड़ छितर-बितर हो गई थी। हाहाकार मचा हुआ था। स्तब्ध सा, सजल नेत्र, मैं पत्थर की तरह वहाँ खड़ा था।

जीवन का मृत्यु में ओझल होना मैंने देखा था। हास्य का धुंधली वेदना में परिवर्तन मैंने देखा था।। स्वच्छ मुद्रा पर किस तरह मौत की धुंध उतर रही थी- यह दृश्य मैंने देखा था। जीवन क्या एक हास्य ही है। मृत्यु धुंध-सी उदास, धूमिल और निराशाजनक। जीवन में और मृत्यु में कितना पतला और महीन फासला है।

इतिहास का मोड़ मैंने देखा। समय को मैंने देखा। समय को मुड़ते मैंने देखा, इतिहास बनते और बिगड़ते देखा। समय को रूकते वे क्या क्षण थे। क्या मोड़ था। मैं

देखता ही रह गया। और उस स्मृति को याद ही करता जाऊँगा। क्या देखा मैंने? कभी-कभी भूल भी जाया करता हूँ।

तब मैं नहीं ठीक समझ सका कि मैं क्या देख रहा हूँ। उसका कितना महत्व है। शायद जीवन में, इतिहास के महान क्षण उतने ही साधारण होते हैं जितने कि बाकी, परंतु कल्पना, इंतजार और परिदृश्य उन्हें वह बना देता है जो कि बाद में बहुत अद्भुत नजर आता है।

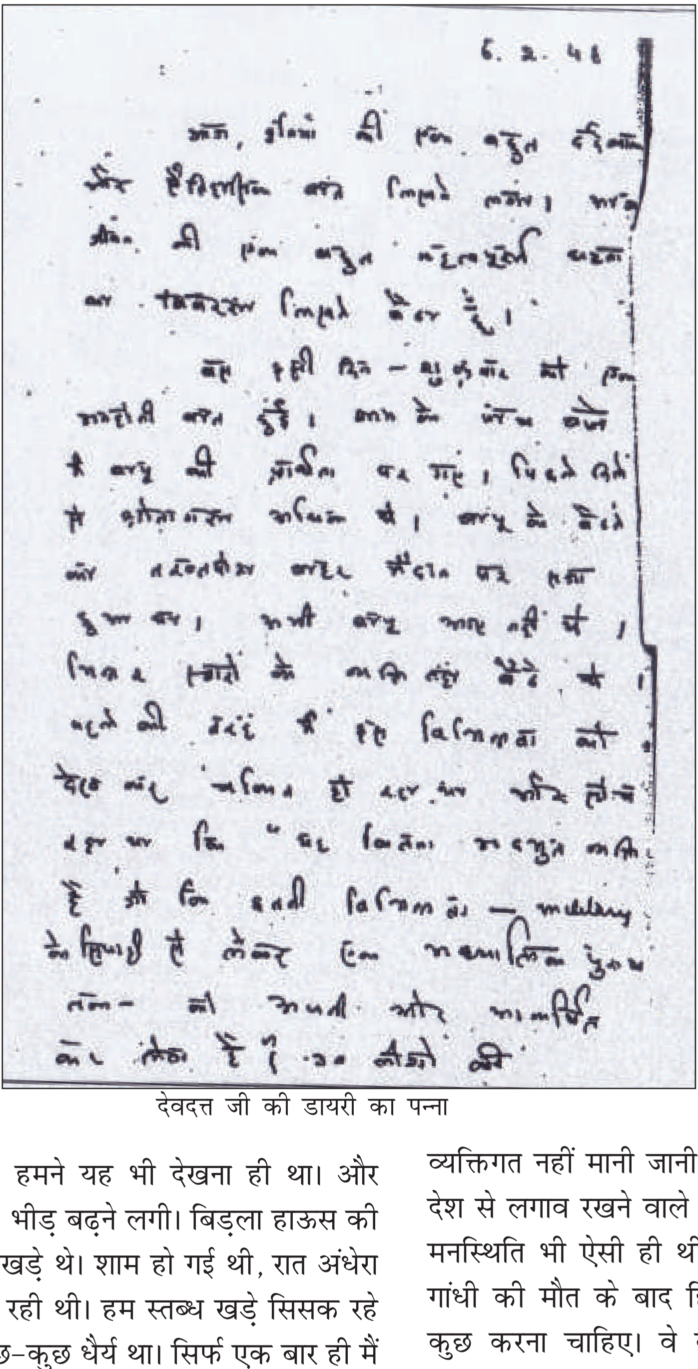
6. 2. 48

देवदत्त जी की डायरी का पन्ना

लेकिन उस वक्त मेरा एक हिस्सा तो जागरूक अवश्य था-जो व्यवहार बुद्धि थी। मैं रोना चाहता था। उसांसे भर रहा था। आँखें सजल थीं। लेकिन व्यथा ने इतना प्रस्तर कर दिया था कि यह भी नहीं कर सका-क्यों घटना का महत्व ही नहीं आंक सका। कहानी खत्म हो गई। बापू जो कल तक कितना सजीव और शक्तिशाली था आज इतिहास बन गया। आज यह एक इतिहास की बात है। हमने यह भी देखना ही था। और उसके बाद नेता आए। भीड़ बढ़ने लगी। बिड़ला हाऊस की सड़क भर गई। लोग खड़े थे। शाम हो गई थी, रात अंधेरा फैलाती हुई चली आ रही थी। हम स्तब्ध खड़े सिसक रहे थे। उन उसांसों में कुछ-कुछ धैर्य था। सिर्फ एक बार ही मैं खुल कर क्षण भर के लिए अपने को खो कर रोया। वे बेदना और व्यथा के क्षण स्थिर थे, अदृश्य से, निश्चल थे। मैं चिड़चिड़ा बन गया।

उस बिड़ला हाऊस के दरवाजे की बत्तियाँ जल उठी थी? लेकिन वह अंधेरा-प्रगाढ़ अंधेरा दूर न हुआ। उल्टे, प्रकाश धुंधला हो गया। उस अंधकार-छिदत प्रकाश में, दरवाजे के ऊपर एक धुंधला आकार-गांधी टोपी पहने, उदास-सा चेहरा-भरी आवाज में कुछ कह रहा था... 'कल बारह बजे हम साथ जाएंगे और अकेले लौट आएंगे,' जवाहरलाल के शब्द थे।

लेकिन मैं देख रहा था और सोच रहा था 'प्रकाश चला गया।' बस नेहरू भी वहाँ इसी तरह उठे - धुंधला, मौन, अस्पष्ट जिस तरह यहा धुंधला प्रकाश अंधेरे से लड़ रहा है। नेहरू का उस धुंधले प्रकाश में उठना मुझे उसी तरह नजर आया। वह एक प्रतीक था आने वाले इतिहास का..

हम घर की तरफ बढ़े। धीरे-धीरे...। सड़कें सूनी थीं। उन पर धूमिल बत्तियां जल रही थीं। कनॉट प्लेस मूक अंधेरे के आगोश में अपना वैभव और बिलास छिपाए हुए था। रेडियो की भनक कानों में पड़ी 'दीपक बुझ गया', नेहरू की भर्राई आवाज ने उस अंधेरे को जगा दिया।...

गांधीजी के बलिदान के प्रति उपरोक्त प्रतिक्रिया व्यक्तिगत नहीं मानी जानी चाहिए। मेरी पीढ़ी के बहुत से देश से लगाव रखने वाले बच्चे संवेदनशील नौजवानों की मनस्थिति भी ऐसी ही थी, उस समय वे समझते थे कि गांधी की मौत के बाद हिंदुस्तान खत्म हो जाएगा। उन्हें कुछ करना चाहिए। वे कोई तरीका ढूंढ़ने लगे केवल व्यक्तिगत स्तर पर, सामूहिक रूप में नहीं।

डायरी में 16 फरवरी 1948 को लिखा निम्नलिखित विवरण इस बात पर रोशनी डालता है कि किस तरह इस पीढ़ी के कुछ नौजवान भटक कर किसी और दिशा में चल पड़े; उनका मानस कैसे बदला।

'मेरे लिए सड़क मानो सूनी थी। अपने विचारों में खोया-सा, न मालूम कब मैं उस चौक को पार कर रीगल सिनेमा के सामने की भीड़ से निकलता हुआ, जंतर-मंतर रोड के सूनेपन को चीर एआईसीसी के दफ्तर के सामने जा पहुँचा। सोच कोई गहरी ही होगी। भावना की खुमारी में कितनी सात्विक तन्मयता छिपी है। बाहर चपरासी खड़ा था। 'कृपलानी जी अंदर हैं?' मैंने चौंक कर पूछा। मेरी मस्ती जाती रही। मैं पृथ्वी पर आ गया था।

सरदार साहब ने मुझे सिर से पांव तक ताड़ा और बोले 'क्या काम है? कागज का पुर्जा दो। पूछ आता हूँ।'

मैंने ऐसा ही किया। वह उसे लेकर चला गया। मैं सोचने लगा 'उन्हें पहले पूछ लूंगा कि पंद्रह मिनट दे सकते हैं। तब सारी बात कह दूंगा, खोलकर।'

वे सुनकर खुश तो होंगे। हां, भाई ठीक तो है। हम लोग उनके पास न जाएं तो फिर जाएं किस के पास-सीख के लिए, शंका में संदेह में-आदमी अच्छा है। बात तो सुन ही लेंगे। डरूंगा नहीं... इतनी ढांढस देने पर भी हृदय की धक-धक कानों को सुनाई दे रही थी। गालों पर खून चढ़ता आ रहा था। माथे पर बूंदाबांदी होने ही वाली थी। आँखें तन रही थी। सरदार साहब आए और मुझे लिवा ले गए। उत्सुकता से मैं पीछे हो लिया। 'दादा। ये हैं' सरदार ने एक तरफ खड़े होकर इशारा किया। मैंने दूर से देखा। बरामदे में आराम कुर्सी पर से एक चश्मे वाला सिर घूमा और मेरी तरफ देखकर कुछ हिला। इतनी देर में मैं उनके सामने पहुँच गया। प्रणाम किया, कुछ झुक कर। आगे बढ़ा। माथे पर बरसात हो रही थी। पसीना बह रहा था। सिकुड़ कर सामने कुर्सी पर बैठ गया।

कृपलानीजी ने चश्मा उतारा। एक साइड यूएसए शीर्षक वाली किताब धर दी। अपनी छोटी-छोटी आँखों से देखते हुए, अपनी गहरी, शराबी-सी आवाज में बोले 'कहिए' मैं अपने में न था। संतुलन खो चुका था। आँखों में अजब प्रकार की निरीहता और श्रद्धा थी। जबान पर ठीक शब्द न आता था। झिझककर बोला राजेंद्र बाबू ने जो अपील- पैसों और कार्यकर्ताओं के लिए की थी सो पैसे तो मैं दे नहीं सकता- स्वयं ही आ गया हूँ। उसके बारे में कुछ बताइए'।

'काम? काम कैसा? मैं तो खुद बेकार हूँ।' 'उन्होंने रचनात्मक कार्य के लिए अपील की थी न। उसने तो लिखा था। उनके पी.ए. ने मुझे बताया कि आप सेक्रेटरी हैं न उस कमेटी के...। सेक्रेटरी तो हूँ। मेरे पासे कौन-सी तिजोरी है जो आदमी रखूं। मेरा काम तो पैसों का है। आप कहाँ के रहने वाले हैं?'

वे सुनकर खुश तो होंगे। हां, भाई ठीक तो है। हम लोग उनके पास न जाएं तो फिर जाएं किस के पास-सीख के लिए, शंका में संदेह में-आदमी अच्छा है। बात तो सुन ही लेंगे। डरूंगा नहीं... इतनी ढांढस देने पर भी हृदय की धक-धक कानों को सुनाई दे रही थी। गालों पर खून चढ़ता आ रहा था। माथे पर बूंदाबांदी होने ही वाली थी। आँखें तन रही थी। सरदार साहब आए और मुझे लिवा ले गए। उत्सुकता से मैं पीछे हो लिया। 'दादा। ये हैं' सरदार ने एक तरफ खड़े होकर इशारा किया। मैंने दूर से देखा। बरामदे में आराम कुर्सी पर से एक चश्मे वाला सिर घूमा और मेरी तरफ देखकर कुछ हिला।

'मैं तो जालंधर का हूँ' सिर झुका कर कहा- दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ता हूँ। बहुत दिनों से इच्छा थी कि काम करूँ लेकिन कैसे करूँ, क्या करूँ पता नहीं लगता था। मन दुविधा में था। अब यह अपील देखकर आ गया हूँ। वह क्या स्कीम है?

स्कीम तो नई कुछ नहीं, उन्होंने हंसकर कहा। मैं भी हंसा। कुछ तनाव कम हो रहा था। आँख चुरा कर किताब का टाइटल भी पढ़ा। उनकी तीखी नाक, छोटी-छोटी आँखें, ओठों पर लगा हुआ चूना, उनका हावभाव यह सब अब चीन्ह सका। आँखों में एक हीन विनय, मुँह पर भय मिश्रित भाव खेल रहे थे। सिकुड़ा-सा मुँह भांप रहा था। था। उनकी बातें सुन रहा था, अपने संतुलन को भूला हुआ।

'अच्छा कह कर उठा। और बाहर आ गया। खोया–खोया। फिर उसी सूनेपन, भीड़ और चौराहे से होकर न मालूम कब नेहरू पार्क की बैंच पर जा बैठा। यह मस्ती तीव्र थी। वेदनामय असंतोष लिए हुए थी। भूखी थी। जो कुछ मैंने कहा उससे कहने के ढंग पर असंतोष था। जो कुछ नहीं कहा उसके न कर सकने की अधूरी साध तंग कर रही थी। वहाँ की घबराहट की स्मृति शर्मिंदा कर रही थी। और फिर वह तिजोरी वाली बात, वह बेकार सी टिप्पणी याद आती और सोच बढ़ती। क्या ये कागज के रावण नहीं हैं? कहाँ है वह गंभीरता? वे क्यों अनमनस्क थे। आदर्श क्या वक्त काटने के लिए ही हैं? विचार आया। मानवता इतनी विशाल होनी चाहिए कि कहने वाले को अपनी बात कहने का मौका देते। ऐसे प्रश्न करने चाहिए कि कहने वाला और उत्साहित होकर अपनी बात कहता।... बापू याद आए।

खैर। वही बैंच पर लेट गया। उदासी ने घेर लिया। आदर्श क्या है? सब कल्पना है। सीधासादा जीवन व्यतीत करना ठीक है। आदर्श वास्तव नहीं। ।। मृगतृष्णा ही है। क्या धरा है... ये लोग तो आदर्शों से खेलते हैं... एक घंटा लेटा रहा।

बाद में उठा। मैं अपने में था विचार आया, जीवन में पहली बार तुम एक नेता से मिले। कृपलानी से मिले, क्या यह महत्व की बात नहीं।

एक मतिभ्रम व्यक्ति ने बापू को मार डाला

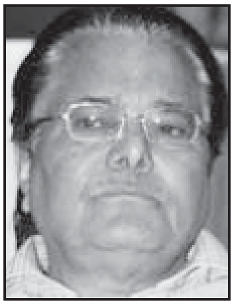

के. विक्रम राव

निर्मम हत्यारे नाथूराम गोड्से को 75 वर्ष पूर्व फांसी दी गई थी। उसका चित्रण यह पेश है।

रायटर संवाद समिति के रिपोर्टर पी.आर. राय को उसके ब्यूरो प्रमुख डून कैम्पबेल ने बिडला हाउस भेजा था क्योंकि महात्मा गांधी अपनी प्रार्थना सभा में घोषणा कर सकते थे कि हिन्दु-मुस्लिम सौहार्द हेतु वे फिर अनशन करेंगे। 'फोन करना यदि कुछ गरम खबर हो तो,' उन्होंने निर्देश दिये। राय ने फोन किया मगर केवल पाँच शब्द ही बोल पाया: 'चार गोलियाँ बापू पर चली।' आवाज थरथरा रही थी, अस्पष्ट थी। समय था: शाम के 5.13 (30 जनवरी 1948) और तभी कैम्पबेल ने फ्लैश भेजा 'डबल अर्जेन्ट, गांधी शाट फोर टाइम्स पॉइन्ट ब्लैंक रेंज वर्स्ट फियर्ड।' कैम्पबैल दौड़ा अलबुकर रोड (आज तीस जनवरी मार्ग) की ओर। विस्तार में रपट बाद में आई जिसमें गौरतलब बात थी कि गोली लगते ही गांधी जी अपनी पौत्री आभा के कंधों पर गिरे। आभा ने कहा तब बापू 'राम, रा.....' कहते कहते अचेत हो गये। दूसरा कंधा पौत्रवधु मनु का था जिसने बापू को संभाला। दोनों की सफेद खादी की साड़ियां रक्तरंजित हो गई।

अफवाह थी कि हत्यारा मुसलमान था। सरदार वल्लभभाई पटेल ने रेडियो से घोषणा कराई कि मारनेवाला हिन्दू था। दंगे नहीं हुये। दुनिया तबतक जान गई कि एक मतिभ्रम हिन्दू उग्रवादी ने बापू को मार डाला।

आखिर कैसा, कौन और क्या था नाथूराम विनायक गोड्से? क्या वह चिन्तक था, ख्याति प्राप्त राजनेता था, हिन्दू महासभा का निर्वाचित पदाधिकारी था, स्वतंत्रता सेनानी था? इतनी ऊंचाइयों के दूर-दूर तक भी नाथूराम गोड्से कभी पहुँच नहीं पाया था। पुणे शहर के उसके पुराने मोहल्ले के बाहर उसे कोई नहीं जानता था, जबकि वह चालीस की आयु के समीप था।

नाथूराम स्कूल से भागा हुआ छात्र था। नूतन मराठी विद्यालय में मिडिल की परीक्षा में फेल हो जाने पर उसने पढ़ाई छोड़ दी थी। उसका मराठी भाषा का ज्ञान बड़े निचले स्तर का था। अंग्रेजी का ज्ञान तो था ही नहीं। जीविका हेतु उसने सांगली शहर में दर्जी की दुकान खोल ली थी। उसके पिता विनायक गोड्से डाकखाने में बाबू थे, मासिक आय पाँच रुपये

रायटर संवाद समिति के रिपोर्टर पी.आर. राय को उसके ब्यूरो प्रमुख डून कैम्पबेल ने बिडला हाउस भेजा था क्योंकि महात्मा गांधी अपनी प्रार्थना सभा में घोषणा कर सकते थे कि हिन्दु-मुस्लिम सौहार्द हेतु वे फिर अनशन करेंगे। 'फोन करना यदि कुछ गरम खबर हो तो,' उन्होंने निर्देश दिये। राय ने फोन किया मगर केवल पाँच शब्द ही बोल पाया: 'चार गोलियां बापू पर चली।' आवाज थरथरा रही थी, अस्पष्ट थी।

थी। नाथूराम अपने पिता का लाड़ला था क्योंकि उसके पहले जन्मी सारी संतानें मर गयी थी। नाथूराम के बाद तीन और पैदा हुए थे जिनमें था गोपाल, जो नाथूराम के साथ सह- अभियुक्त था। गोपाल ने लिखा था कि अग्रज विनायक अजीब सा तांत्रिक अनुष्ठान करता था। एक तांबे की प्लेट ऊपर काजल पोतकर, दो दिये जलाकर नाथूराम पास जमा भीड़ से सवाल पूछने को कहता था। फिर उस प्लेट को देखता था मानो कोई पारलौकिक शक्ति उत्तर लिख रही हो। उसके आसपास जमा भीड़ उसके द्वारा पढ़ी गयी बातों पर भरोसा करती थी। उसे सर्वज्ञ मानती थी।

नाथूराम की युवावस्था किसी खास घटना अथवा विचार के लिए नहीं जानी जाती है। उस समय उसके हम उम्र के लोग भारत में क्रान्ति की अलख जगा रहे थे। शहीद हो रहे थे। इस स्वाधीनता संग्राम की हलचल से नाथूराम को तनिक भी सरोकार नहीं था। अपने नगर पुणे में वह रोजी-रोटी के ही जुगाड़ में लगा रहता था। पुणे में 1910 में जन्मे, नाथूराम के जीवन की पहली खास घटना थी अगस्त, 1944, में जब हिन्दू महासभा नेता एल.जी. थट्टे ने सेवाग्राम में धरना दिया था। तब महात्मा गांधी भारत के विभाजन को रोकने के लिए मोहम्मद अली जिन्ना से वार्ता करने मुम्बई जा रहे थे। चौंतीस वर्षीय अधेड़ नाथूराम उन प्रदर्शनकारियों में शरीक था। उसके जीवन की दूसरी घटना थी एक वर्ष बाद, जब ब्रिटिश वायसराय ने भारत की स्वतंत्रता पर चर्चा के लिए राजनेताओं को शिमला आमंत्रित किया था तब नाथूराम पुणे की किसी अनजान पत्रिका के संवाददाता के रूप में वहाँ उपस्थित था।

जो लोग नाथूराम गोड्से को प्रशंसा का पात्र समझते हैं, उन्हें खासकर याद करना होगा कि गांधीजी की हत्या के बाद जब नाथूराम के पुणे आवास तथा मुम्बई के मित्रों के घर पर छापे पड़े थे तो मारक अस्त्रों का भण्डार पकड़ा गया था जिसे उसने हैदराबाद के निजाम पर हमला करने के नाम पर बटोरा था। यह दीगर बात है कि इन असलहों का प्रयोग कभी नहीं किया गया। मुम्बई और पुणे के व्यापारियों से अपने हिन्दू राष्ट्र संगठन के नाम पर नाथूराम ने अकूत धन वसूला था जिसका कभी लेखा-जोखा तक नहीं दिया गया। बारीकी से परीक्षण करने पर निष्कर्ष यही निकलता है कि कतिपय हिन्दू उग्रवादियों द्वारा नाथूराम भाड़े पर रखा गया हत्यारा था। जेल में उसकी चिकित्सा रपटों से ज्ञात होता है कि उसका मस्तिष्क अधसीसी के रोग से ग्रस्त था। यह अड़तीस वर्षीय बेरोजगार, अविवाहित और दिमागी बीमारी से त्रस्त था। नाथूराम किसी भी मायने में मामूली मनस्थिति वाला व्यक्ति नहीं हो सकता। उसने गांधी की हत्या का पहला प्रयास जनवरी 20, 1948, को किया था। उसने सहअभियुक्त मदनलाल पाहवा से मिलकर नयी दिल्ली के बिडला भवन पर बम फेंका था, जहां गांधी जी प्रार्थना सभा कर रहे थे। बम का निशाना चूक गया। पाहवा पकड़ा गया, मगर नाथूराम भाग गया और मुम्बई में छिप गया। दस दिन बाद अपने अधूरे काम को पूरा करने वह दिल्ली आया था। तीस जनवरी की संध्या की एक घटना से साबित होता है कि नाथूराम कितना धर्मानिष्ठ हिन्दू था। हत्या के लिये तीन गोलियां दागने के पूर्व, वह गांधी जी की राह रोकर खड़ा हो गया था। पोती मनु ने नाथूराम को हटने के लिए आग्रह किया क्योंकि गांधी जी को प्रार्थना के लिए देरी हो गई थी। इस धक्का-मुक्की में मनु के हाथ से पूजावाली माला और आश्रम भजनावालि जमीन पर गिर गयी। उसे रौंदता हुआ नाथूराम आगे बढ़ा पिछली सदी का घोरतम अपराध करने।

उसका मकसद कितना पैशाचिक रहा होगा, इसका अनुमान इस बात से लग जाता है कि हत्या के बाद पकड़े जाने पर नाथूराम ने अपने को मुसलमान दर्शाने की कोशिश की थी। अर्थात् एक तीर से दो निशाने सध जाने। गांधी की हत्या हो जाती, दोष मुसलमानों पर जाता और उनका सफाया शुरू हो जाता। ठीक उसी भांति जो 1984 के अक्टूबर 31 को इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सिखों के साथ हुआ था। न जाने किन कारणों से अपने राष्ट्र के नाम सम्बोधन में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने नहीं बताया कि हत्यारे का नाम क्या था। तुरन्त बाद आकाशवाणी भवन जाकर गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल ने देशवासियों को बताया कि महात्मा का हत्यारा एक हिन्दू था। सरदार पटेल ने मुसलमानों को बचा लिया। जो लोग अभी भी नाथूराम गोड्से के प्रति थोड़ी नरमी बरतते हैं उन्हें इस निष्ठुर क्रूर हत्यारे के बारे में तीन प्रमाणित तथ्यों पर गौर करना चाहिए। प्रथम, गांधी जी को मारने के दो सप्ताह पूर्व नाथूराम ने अपने जीवन को, काफी बड़ी राशि के लिये बीमा कंपनी से सुरक्षित कर लिया था। उसकी मौत के बाद उसके परिवारजन इस बीमा राशि से लाभान्वित होते। किसी ऐतिहासिक मिशन को लेकर चलने वाला व्यक्ति बीमा कंपनी से मुनाफा कमाना चाहता था।

अपने मृत्यु दण्ड के निर्णय के खिलाफ नाथूराम ने लंदन की प्रिवीं कांउसिल में अपील की थी। तब भारत स्वाधीन हो गया था। फिर भी नाथूराम ने ब्रिटेन के हाउस ऑफ लॉडर्स की न्यायिक पीठ से सजा-माफी की अभ्यर्थना की थी। अंग्रेज जजों ने उसे अस्वीकार कर दिया था। उसके भाई गोपाल गोड्से ने जेल में प्रत्येक गांधी जयंती में बढ़चढ़कर शिरकत की, क्योंकि जेल नियम में ऐसा करने पर सजा की अवधि में छूट मिलती है। गोपाल पूरी सजा के पहले ही रिहाई पा गया था। पुणे के निकट खड़की उपनगर के सेना मोटर परिवहन विभाग में एक क्लर्क था गोपाल गोड्से, जो जिरह के दौरान गांधी हत्या से अपने को अनजान और निर्दोष बताता रहा। अदालत ने उसे आजीवन कारावास दिया। आज जल्दी रिहा होकर, पुणे के अपने सदाशिवपेट मोहल्ले से गोपाल गुर्राता है कि उसका भाई नाथूराम शहीद है और स्वयं को वह एक राष्ट्रभक्त आन्दोलनकारी की भूमिका में पेश कर रहा है। बेझिझक कहता है कि एक अधनंगे, बलहीन, असुरक्षित बूढ़े की हत्या पर उसे पश्चाताप अथवा क्षोभ नहीं है।

कुछ लोग नाथूराम गोड्से को उच्चकोटि का चिन्तक, ऐतिहासिक मिशनवाला पुरुष तथा अदम्य नैतिक ऊर्जा वाला व्यक्ति बनाकर पेश करते हैं। उनके तर्क का आधार नाथूराम का वह दस-पृष्ठीय वक्तव्य है जिसे उसने बड़े तर्कसंगत, भरे भावना शब्दों में लिखकर अदालत में पढ़ा था कि उसने गांधी जी क्यों मारा। उस समय दिल्ली में ऐसे कई हिन्दुवादी थे जिनका भाषा पर आधिपत्य, प्रवाहमयी शैली का अभ्यास तथा वैचारिक तार्किकता का ज्ञान पूरा था। उनमें से कोई भी नाथूराम का ओजस्वी वक्तव्य लिखकर जेल के भीतर भिजवा सकता था। जो व्यक्ति मराठी भी भलीभांति न जानता हो। अंग्रेजी से तो निरा अनभिज्ञ हो, उस जैसा कमजोर छात्र परीक्षा में अचानक सौ बटा सौ नम्बर ले आये? संभव है? हम भारतीय अपनी दोमुखी छलभरी सोच को तजकर, सीधी, सरल बात करना कब शुरू करेंगे, कि हत्या एक जघन्य अपराध और सिर्फ नृशंस हरकत है। वह भी एक वृद्ध, लुकाटी थामे, अंधनंगे, परम श्रृद्धालु हिन्दू की जो राम का अनन्य, आजीवन भक्त रहा।

> ***गांधी की हत्या हो जाती, दोष मुसलमानों पर जाता और उनका सफाया शुरु हो जाता। ठीक उसी भांति जो 1984 के अक्टूबर 31 को इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सिखों के साथ हुआ था। न जाने किन कारणों से अपने राष्ट्र के नाम सम्बोधन में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने नहीं बताया कि हत्यारे का नाम क्या था। तुरन्त बाद आकाशवाणी भवन जाकर गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल ने देशवासियों को बताया कि महात्मा का हत्यारा एक हिन्दू था। सरदार पटेल ने मुसलमानों को बचा लिया। जो लोग अभी भी नाथूराम गोड्से के प्रति थोड़ी नरमी बरतते हैं...।***

संपर्क:

मो. 9415000909

ई-मेल: k.vikramrao@gmail.com

विमर्श

प्राकृतिक चिकित्सा के समर्पित हिमायती गांधीजी

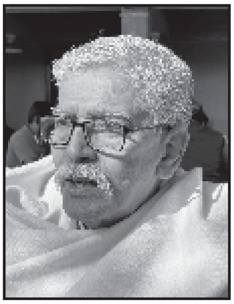

नारायण भाई भट्टाचार्य

आधुनिक भारतीय इतिहास में महात्मा गांधी उन महत्वपूर्ण हस्तियों में से एक थे, जिन्होंने राजनीति, दर्शन और सामाजिक सुधार में महत्वपूर्ण और अद्‌भुत योगदान दिया। इन सबके साथ गांधीजी को प्राकृतिक चिकित्सा का भी बहुत गहरा ज्ञान था। उन्होंने बड़े पैमाने पर मानव स्वास्थ्य, मानव रोगों और उनके इलाज पर लिखा है और अपने प्राकृतिक चिकित्सा के ज्ञान का प्रयोग भी किया है। गांधीजी का विचार था कि जिस व्यक्ति के पास स्वस्थ शरीर, स्वस्थ दिमाग और स्वस्थ भावनाएँ होती हैं, वही स्वस्थ व्यक्ति होता है। उनका विचार था कि स्वस्थ रहने के लिए केवल शारीरिक शक्ति आवश्यक नहीं है। एक स्वस्थ व्यक्ति को अपने शरीर के बारे में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए। गांधीजी ने मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के बीच के संबंधों को समझाया। गांधीजी का विचार था कि स्वस्थ शरीर के लिए स्वस्थ पाचन आवश्यक है। इस प्रकार, महात्मा गांधी राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक विचारों के साथ अपने स्वास्थ्य सम्बन्धी विचारों एवं प्रयोगों के कारण भी अपना एक विशेष महत्व रखते हैं।

आधुनिक भारत में प्राकृतिक चिकित्सा को बढ़ावा देने में महात्मा गांधी का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा को प्रचलित करने के लिए उरली काँचन में एक केंद्र की स्थापना की। उन्होंने स्वयं और अपने परिवार के सदस्यों का भी निसर्ग उपचार करके उदाहरण पेश किया । गांधी जी के मन में रोगियों की सेवा सुश्रूषा करने और गरीबों की सेवा करने की उत्कंठा हमेशा बनी रहती थी। वे कुदरत के निकट रहकर बिताए जाने वाले सादे और सरल जीवन की बहुत कद्र करते थे। ऐसा सादा सरल जीवन जी कर ही उन्होंने स्वास्थ्य के सादे नियम बनाए थे और उन पर अमल भी किया था। शाकाहार और जलाहार में उनकी आस्था थी। इसी कारण से उन्होंने आहार संबंधी अनेक सुधार किए, जिनका आधार व्यक्तिगत

गांधीजी का विचार था कि जिस व्यक्ति के पास स्वस्थ शरीर, स्वस्थ दिमाग और स्वस्थ भावनाएं होती हैं, वही स्वस्थ व्यक्ति होता है। उनका विचार था कि स्वस्थ रहने के लिए केवल शारीरिक शक्ति आवश्यक नहीं है। एक स्वस्थ व्यक्ति को अपने शरीर के बारे में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए। गांधीजी ने मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के बीच के संबंधों को समझाया।

प्रयोगों से प्राप्त परिणामों पर था। डॉक्टर लुई कुनै ने प्राकृतिक उपचार पर जो कुछ लिखा है, उससे महात्मा गांधी बहुत अधिक प्रभावित हुए थे। गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में जबसे लुई कुनै की पुस्तक *न्यू साइंस ऑफ हीलिंग और एडॉल्फ जस्ट की पुस्तक 'रिटर्न टू नेचर'* का अध्ययन किया तो वे प्राकृतिक चिकित्सा के समर्पित हिमायती बन गए।

पूर्व प्रधानमंत्री और निसर्ग उपचार की वकालत करने वाले मोरारजी देसाई के मुताबिक मनुष्य का शरीर एक अद्‌भुत और संपूर्ण यंत्र है जब यह बिगड़ जाता है तो बिना किसी दवा के अपने को सुधार लेता है। बस, उसे ऐसा करने का मौका दिया जाए। अगर हम अपनी खाने पीने की आदतों में संयम का पालन नहीं करते या अगर हमारा मन आवेश भावना या चिंता से क्षुब्ध हो जाता है तो हमारा शरीर अंदर की सारी गंदगी को बाहर नहीं निकाल सकता और शरीर के जिस भाग में गंदगी बनी रहती है, उसमें अनेक प्रकार के जहर पैदा होते हैं यह जहर ही उन लक्षणों को जन्म देते हैं जिन्हें हम रोग कहते हैं। वास्तव में रोग शरीर का अपने भीतर के जहरों से मुक्त होने का प्रयत्न ही है। अगर उपवास करके एनिमा द्वारा आंतें साफ करके कटि स्नान, घर्षण स्नान आदि विविध स्नान करके और शरीर के विभिन्न अंगों की मालिश करके भीतर के जहरों से मुक्त होने की इस प्रक्रिया में हम अपने शरीर की सहायता करें तो वह फिर से पूर्ण स्वस्थ हो सकता है।

गांधी जी की नजर में वास्तव में यही प्राकृतिक उपचार है जिसका उन्होंने जीवन भर प्रयोग किया और प्रचार किया। *कुदरती उपचार* पुस्तक के संपादक भारतन कुमारप्पा के मुताबिक गांधी जी चाहते थे कि आहार के संबंध में मनुष्य प्रकृति के नियमों का पालन करे, शुद्ध और ताजी हवा का सेवन करे, नियमित कसरत करे, स्वच्छ वातावरण में रहे और अपना हृदय शुद्ध रखे। लेकिन आज ऐसा करने की बजाय मनुष्य को आधुनिक चिकित्सा पद्धति के कारण जी भरकर विषय भोग में लीन रहने का, स्वास्थ्य और सदाचार का हर नियम तोड़ने का और उसके बाद केवल व्यापार के लिए तैयार की जाने वाली दवाइयों के जरिए शरीर का इलाज करने का प्रलोभन मिलता है। इन सब के प्रति मन में विद्रोह की भावना होने के कारण गांधीजी ने अपने लिए दवाइयों के उपयोग के बिना रोगों पर विजय पाने का मार्ग खोजने का प्रयत्न किया। इसके सिवा आज की चिकित्सा पद्धति रोग को केवल शरीर से संबंध रखने वाली चीज मानकर उसका उपचार करना चाहती है लेकिन गांधीजी तो मनुष्य को उसके संपूर्ण और समग्र रूप में देखते थे इसलिए वे अनुभव से ऐसा मानते थे कि शरीर की बीमारी खासतौर से मानसिक या आध्यात्मिक कारणों से होती है और इसका स्थाई उपचार केवल तभी हो सकता है जब जीवन के प्रति मनुष्य का संपूर्ण दृष्टिकोण ही बदल जाए इसलिए उनकी राय में शरीर के रोगों का उपचार खासतौर से आत्मा के क्षेत्र में, ब्रह्मचर्य द्वारा सिद्ध होने वाले आत्म संयम और आत्म संयम में, स्वास्थ्य के विषय में प्रकृति के नियमों के ज्ञान पूर्ण पालन में और स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन के लिए अनुकूल भौतिक और सामाजिक वातावरण निर्माण करने में खोजा जाना चाहिए। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा की गांधी जी की कल्पना उस अर्थ से कहीं अधिक व्यापक है, जो आज उस शब्द से आमतौर पर समझी जाती है। प्राकृतिक चिकित्सा रोग के हो जाने के बाद केवल उसे मिटाने की पद्धति नहीं है बल्कि प्रकृति के नियमों के अनुसार जीवन बिता कर रोग को पूरी तरह रोकने की कोशिश है । गांधीजी मानते थे कि प्रकृति के नियम वही हैं, जो ईश्वर के नियम हैं। इस दृष्टि से रोग के प्राकृतिक उपचार में केवल मिट्टी, पानी, हवा, धूप उपवासों और ऐसी दूसरी वस्तुओं के उपयोग का ही समावेश नहीं होता बल्कि इससे भी अधिक उसमें राम नाम या ईश्वर के कानून के द्वारा हमारे शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सामाजिक संपूर्ण जीवन को बदल डालने की बात आती है। इसलिए राम नाम गांधीजी की दृष्टि में केवल ऐसा जादू नहीं है, जो मुंह से बोलने भर से कोई चमत्कार कर दिखाएगा। राम नाम जपने का अर्थ है मनुष्य के हृदय का और उसकी जीवन पद्धति का संपूर्ण परिवर्तन, जिससे ईश्वर के साथ उसका

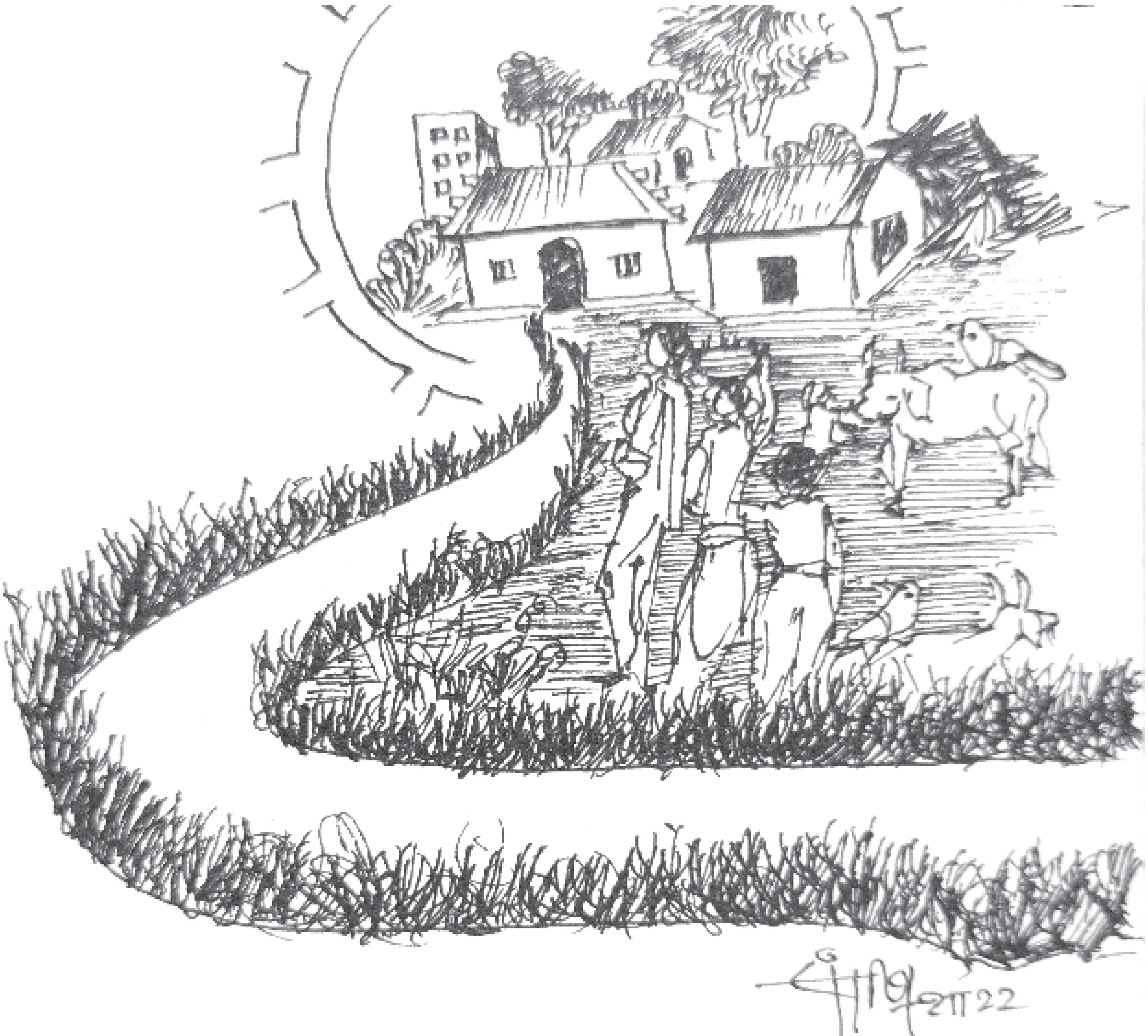

मेल सधता है और संपूर्ण जीवन के मूल स्रोत के रूप में ईश्वर से वह ऐसी शक्ति और ऐसा जीवन प्राप्त करता है जो रोगों पर सदा ही विजयी सिद्ध होते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा करने वाला चिकित्सक आज रोगी को उसके लिए कोई जड़ी बूटी नहीं बेचता। वह तो अपने रोगी को जीवन जीने का ऐसा तरीका सिखाता है जिससे रोगी अपने घर में रहकर अच्छी तरह जीवन बिता सके और कभी बीमार ही नहीं पड़े। प्राकृतिक चिकित्सक रोगी की खास तरह की बीमारी को खत्म करके ही संतुष्ट नहीं हो जाता।आम डॉक्टरों में ज्यादातर की इतनी ही दिलचस्पी रहती है कि वह रोगियों के रोग को और उसके लक्षणों को समझ ले और उसका इलाज खोज निकाले और इस तरह सिर्फ रोग संबंधी बातों का ही अभ्यास करें। दूसरी तरफ प्राकृतिक चिकित्सा करने वाले को तंदुरुस्ती के नियमों का अभ्यास करने में ज्यादा दिलचस्पी होती है। जहाँ आम डॉक्टरों की दिलचस्पी खत्म हो जाती है वहीं प्राकृतिक चिकित्सकों की सच्ची दिलचस्पी शुरू होती है। प्राकृतिक चिकित्सा की पद्धति से रोगी की बीमारी को बिल्कुल मिटा देने के साथ ही उसके लिए एक ऐसी जीवन पद्धति की शुरुआत होती है जिसमें बीमारी के लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रह जाती है। इस तरह प्राकृतिक चिकित्सा बेहतर जीवन जीने की एक पद्धति है, रोग मिटाने की पद्धति नहीं।

गांधी स्मारक प्राकृतिक चिकित्सा समिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष और वर्षों से प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापक बनाने में निरंतर सक्रिय लक्ष्मी दास जी कहते हैं कि महात्मा गांधी के पहले भी प्राकृतिक चिकित्सा का कार्य होता था। इस पद्धति के उपयोग का इतिहास बहुत पुराना है लेकिन यह हकीकत है कि गांधी जी ने इस पद्धति को सरल और सर्वग्राही बनाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। प्राकृतिक चिकित्सा की इसी खासियत को देखते हुए गांधी जी को लगा कि प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का हर एक व्यक्ति सहज इस्तेमाल कर सकता है इसलिए उन्होंने माना भी और कहा भी कि अपने डॉक्टर आप बनो। अन्य किसी भी चिकित्सा पद्धति में विश्वास रखने वाला व्यक्ति यह कदापि नहीं कह सकता कि आप खुद अपने डॉक्टर बनो। लेकिन गांधीजी यह कह सके क्योंकि उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा पर इतना भरोसा था कि प्राकृतिक जीवन पद्धति से जीवन जीने वाला व्यक्ति या तो कभी बीमार नहीं होगा, अगर किसी कारण से बीमार हो भी गया तो पांच तत्व मिट्टी, पानी, हवा, अग्नि और आकाश के सही इस्तेमाल से वह फिर से अवश्य ठीक हो जाएगा। गांधी जी का प्राकृतिक चिकित्सा में यह विश्वास किन्ही दूसरों पर किए गए प्रयोगों से या किसी बड़ी अनुसंधानशाला में किए गए प्रयोगों से नहीं बल्कि स्वयं द्वारा अपने ऊपर, अपनी पत्नी के ऊपर और अपने बच्चों पर किए गए सफल उपचार के कारण हुआ था, जिसे जन जन में फैलाने के लिए उन्होंने आजीवन प्रयास किया। महात्मा गांधी ने महा रोग से पीड़ित परचुरे शास्त्री की सेवा सुश्रूषा स्वयं अपने हाथों से की। सरहदी गांधी अब्दुल गफ्फार खान के मलेरिया रोग का इलाज किया। विनोबा भावे के छोटे भाई बालकोवा भावे के पुराने क्षय रोग को भी ठीक किया। बौद्ध धर्म के पंडित धर्मचंद कौशांबी जब अपने जीर्ण और जर्जर शरीर को उपवासों द्वारा छोड़ने पर उतारू हो गए तब गांधी जी ने उनको रोका और उनकी सेवा सुश्रूषा की। इसी तरह उन्होंने घनश्याम दास बिरला, जमनालाल बजाज, कमलनयन बजाज, दमा के रोगी आचार्य नरेंद्र देव और सरदार पटेल आदि के बीमार पड़ने पर प्राकृतिक चिकित्सा की।

गांधीजी ने महाराष्ट्र में पुणे के पास उरली काँचन में यह सोच कर प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र खोला कि गरीब लोग महंगी दवाई नहीं ले सकते और महंगे इलाज नहीं करवा सकते। इस केंद्र की स्थापना के पीछे एक कारण यह भी था कि गांधीजी ऐसा मानते थे कि स्वास्थ्य और आरोग्य विज्ञान के बारे में उन्होंने जीवन भर जो प्रयोग किए हैं, उनका लाभ देश के गरीब लोगों को उठाने का मौका मिले। इसके लिए उन्होंने 23 मार्च 1946 में उरली काँचन में प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र की शुरुआत की। महात्मा गांधी 23 मार्च 1946 को यहां काँचन आए और 30 मार्च 1946 तक रहे। उन्होंने डॉक्टर मेहता, बालकोवा भावे, मणि भाई देसाई, डॉक्टर सुशीला नायर और अन्य शिष्यों की मदद से सैकड़ों रोगियों का उपचार किया। 30 मार्च 1946 को महात्मा गांधी स्वतंत्र भारत के संबंध में ब्रिटिश सरकार के साथ अंतिम वार्ता के लिए दिल्ली के लिए रवाना हुए। महात्मा गांधी ने 1 अप्रैल 1940 को महादेव तात्याबा कांचन जैसे स्थानीय लोगों द्वारा भूमि के रूप में दिए गए दान की मदद से निसर्ग उपचार ग्राम सुधार ट्रस्ट की स्थापना की। मणि भाई के प्रबंधन के तहत टीम ने अच्छे स्वास्थ्य और स्वच्छ तरीकों का प्रचार किया और ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न समस्याओं का अध्ययन किया और ग्रामीण गरीबों के उत्थान के लिए उपयुक्त समाधानों की पहचान की। आश्रम में प्राकृतिक उपचार में गांधीजी द्वारा जारी दिशा निर्देशों का पालन किया गया। पिछले 75 सालों में इस आश्रम ने उल्लेखनीय प्रगति की है। जीवन जीने के तरीके के क्षेत्र में अनूठा उदाहरण स्थापित किया है। देश-विदेश के हर एक कोने से लोग यहां आते हैं और पुरानी बीमारियों के प्रबंधन के लिए बगैर दवा समग्र दृष्टिकोण से अवगत होते हैं।

विमर्श

‘युवा इस देश का नमक है’: महात्मा गांधी और युवा शक्ति

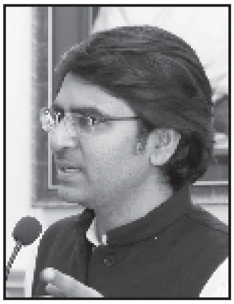

सौरव कुमार राय

सितम्बर 1888 में आँखों में बैरिस्टर बनने का सपना लिए गुजरात से उन्नीस साल का एक काठियावाड़ी नौजवान लंदन पहुँचता है। उसे देश और अपने घर की खूब याद आती थी। माता का प्रेम मूर्तिमान होता था। रात पड़ती और वह रोना शुरू कर देता। घर की अनेक स्मृतियाँ उसे सोने नहीं देती। विदेश का रहन-सहन उसे विचित्र जान पड़ता। लोग विचित्र, घर भी विचित्र, घरों में रहने का ढंग भी विचित्र! खाने योग्य आहार सूखा और नीरस लगता, तिस पर खाने-पीने का परहेज। विलायत में रहना उसे अच्छा नहीं लगता था और देश लौटा नहीं जा सकता था। कुल मिलाकर उसे अपनी स्थिति सरौते के बीच सुपारी जैसी जान पड़ती।

हालाँकि, धीरे-धीरे वह उस माहौल में रमने की कोशिश करने लगा। या यूँ कहिए ‘सभ्य’ बनने के यत्न शुरू हुए। इसके लिए उसने जो रास्ता पकड़ा वह छिछला रास्ता था। नए डिजाइन के कपड़े सिलवाए। एक ‘चिमनी’ टोपी खरीदी। टाई बांधने की कला हस्तगत की। देश में तो उसे आईना हजामत के दिन ही देखने को मिलता था, मगर यहाँ तो बड़े आईने के सामने खड़े रहकर ठीक से टाई बांधने और बाल सँवारने में रोज कई मिनट लगाता। टोपी पहनते और निकालते समय हाथ तो मानो माँग को सहेजने के लिए अनायास ही सिर पर पहुँच जाता था और बीच-बीच में भी उठते-बैठते उन्हें सँवारते रहता।

‘सभ्य’ बनने के लिए सिर्फ इतनी ही टीमटाम काफी न थी। उसने फ्रेंच भाषा सीखनी शुरू की जिसे तत्कालीन यूरोप में नफासत और उच्चताबोध की भाषा मानी जाती थी। उसने नृत्य सीखना शुरू किया। इसके लिए एक कक्षा में भी भरती हुआ। तीन पॉन्ड खर्च कर एक वायोलिन भी खरीदा और उसे सीखने के लिए भी एक कक्षा

‘सभ्य’ बनने के लिए सिर्फ इतनी ही टीमटाम काफी न थी। उसने फ्रेंच भाषा सीखनी शुरू की जिसे तत्कालीन यूरोप में नफासत और उच्चताबोध की भाषा मानी जाती थी। उसने नृत्य सीखना शुरू किया। इसके लिए एक कक्षा में भी भरती हुआ। तीन पॉन्ड खर्च कर एक वायोलिन भी खरीदा और उसे सीखने के लिए भी एक कक्षा ज्वाइन कर ली।

ज्वाइन कर ली। इसके साथ ही लच्छेदार भाषण की कला सीखने के लिए एक और कक्षा में भरती हो गया। अब तो बाबाजी की बिल्लीवाला किस्सा हुआ। चूहों को भगाने के लिए बिल्ली, बिल्ली के लिए गाय, गाय के लिए कुछ और, यों बाबाजी का परिवार बढ़ा, उसी तरह उस नौजवान की 'सभ्य' बनने की कोशिशों में वृद्धि होती रही। विद्यार्जन का मूल उद्देश्य कहीं पीछे छूटने लगा।

जिस नौजवान की आरंभिक गृहासक्तता और तदोपरांत 'सभ्य' बनने के प्रयत्नों का ऊपर उल्लेख हुआ है वह कोई और नहीं बल्कि मोहनदास करमचंद गांधी है। गाँव से शहर आए किसी भी नौजवान विद्यार्थी की यह कहानी हो सकती है। हम में से अधिकांश लोग अपनी युवावस्था में इस दौर से कदाचित गुजरे होंगे। फरक बस इतना है कि गांधीजी को जल्द ही इस बात का एहसास हो गया कि 'सभ्य' बनने की उनकी यह कोशिश फिजूल है। उन्हें यह ज्ञान हुआ कि यदि वे अपने सदाचार से सभ्य समझे जायें तो ठीक है, अन्यथा उन्हें 'सभ्यता' के इन बाहरी छलावों का लोभ छोड़ देना चाहिए। उन्होंने ऐसा ही किया भी। उन्होंने वायोलिन बेच दिया। नाच आदि के जंजाल से मुक्त हुए। अन्य कक्षाओं में भी जाना छोड़ दिया।

गांधीजी की 'सभ्य' बनने की यह सनक करीब तीन महीने तक चली होगी जिसका वर्णन उन्होंने अपनी आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' में विस्तारपूर्वक किया है। यही नहीं अपनी आत्मकथा में गांधीजी अन्य कई लोभों का उल्लेख करते हैं जो युवाओं में आमतौर पर देखी जा सकती है। फिर चाहे गलत संगत का असर हो, या धूम्रपान की लत; गांधीजी अपने निजी अनुभवों और उसके दुष्परिणामों को जिस बेबाकी से अपनी आत्मकथा में दर्ज करते हैं, उसका एक उद्देश्य संभवतः युवा पाठकों को सावधान करना रहा होगा।

चरित्र निर्माण को प्राथमिकता

देश के भविष्य निर्माण में गांधीजी युवाओं की महत्वपूर्ण भूमिका मानते थे। उनके अनुसार युवा इस राष्ट्र के नमक – अर्थात रक्षक तत्त्व – हैं। 22 दिसम्बर 1927 को 'यंग इंडिया' में प्रकाशित अपने लेख में वे एक जगह

कहते हैं कि 'युवकों को, जो भविष्य के विधाता होने का दावा करते हैं, राष्ट्र का नमक-रक्षक तत्त्व-होना चाहिए। यदि यह नमक ही अपना खारापन छोड़ दे, तो उसे खारा कैसे बनाया जाए?' युवाओं का यह खारापन बना रहे इसके लिए यह जरूरी था कि वे विभिन्न प्रकार के लोभ एवं व्यसनों से दूर रहें। यही कारण था कि महात्मा गांधी युवाओं के मामले में चरित्र निर्माण पर विशेष बल दिया करते थे।

गांधीजी शिक्षकों को भी यह हिदायत देते हैं कि वे चाहे अपने छात्रों को दुनिया का सारा ज्ञान सिखा दें, परन्तु यदि वे उनमें सत्य और पवित्रता के प्रति लगन पैदा न कर पायें, तो इसका मतलब यही है कि उन्होंने अपने युवा छात्रों को ऊपर उठाने के बजाए आत्मनाश के मार्ग की ओर प्रवृत्त किया है। गांधीजी यह स्पष्ट तौर पर कहते हैं कि चरित्र के अभाव में ज्ञान बुराई को ही बढ़ावा देनेवाली शक्ति बन कर रह जाती है, जैसा कि हम ऊपर से भले दिखाई देने वाले किन्तु भीतर से...।

इसी क्रम में 1927 में अपनी श्रीलंका यात्रा के दौरान गांधीजी एक पिता के नाते देश के असंख्य लड़कों और लड़कियों को यह कहते हैं कि उनका भाग्य उन्हीं के हाथों में है। इस सिलसिले में वे उन्हें सलाह देते हैं कि 'यदि तुम केवल दो शर्तों का पालन करो तो तुम पाठशाला में क्या सीखते हो या क्या नहीं सीखते, इसकी मैं बिल्कुल परवाह नहीं करूँगा। एक शर्त तो यह कि परिस्थिति कुछ भी क्यों न हो, तुम्हें भारी-से-भारी कठिनाइयों में भी पूरी निर्भयता के साथ सत्य का ही पालन करना चाहिए। सत्यनिष्ठ लड़का-सच्चा वीर अपने मन में कभी किसी चींटी को भी चोट पहुँचाने का ख्याल नहीं आने देगा। वह अपनी पाठशाला के सारे कमजोर लड़कों का रक्षक बनकर रहेगा और पाठशाला के भीतर या बाहर उन सब लोगों की मदद करेगा जिन्हें उसकी मदद की आवश्यकता है। जो लड़का मन, शरीर और कार्य की पवित्रता की रक्षा नहीं करता, उसका पाठशाला में कोई काम नहीं, उसे पाठशाला से निकाल देना चाहिए। शूरवीर लड़का हमेशा अपना मन पवित्र रखेगा और अपने हाथ पवित्र रखेगा। जीवन के इन बुनियादी उसूलों को सीखने के लिए तुम्हें किसी स्कूल में जाने की आवश्यकता नहीं है। और यदि तुमने इस विचित्र पवित्रता को प्राप्त कर लिया, तो तुम यह मान लो कि तुम्हारे जीवन का निर्माण सुदृढ़ नींव पर होगा।'

अपनी इस बात को विस्तार देते हुए 21 फरवरी 1929 को 'यंग इंडिया' में प्रकाशित अपने एक अन्य लेख में महात्मा गांधी देश के युवाओं को यह सलाह देते हैं कि 'अपना सारा ज्ञान और पांडित्य तराजू के एक पलड़े पर और सत्य तथा पवित्रता को दूसरे पलड़े पर रखकर देखो। सत्य और पवित्रता वाला पलड़ा पहले पलड़े से कहीं भारी पड़ेगा। नैतिक अपवित्रता की विषैली हवा आज हमारे विद्यार्थियों में भी जा पहुंची है और किसी छिपी हुई महामारी की तरह उनकी भयंकर बरबादी कर रही है। इसलिए मैं तुम लोगों से, लड़कों से और लड़कियों से अनुरोध करता हूँ कि तुम अपने मन और शरीर को पवित्र रखो। तुम्हारा सारा पांडित्य और शास्त्रों का तुम्हारा सारा अध्ययन बिल्कुल बेकार होगा, यदि तुम उनकी शिक्षाओं को अपने दैनिक जीवन में न उतार सको।'

गांधीजी शिक्षकों को भी यह हिदायत देते हैं कि वे चाहे अपने छात्रों को दुनिया का सारा ज्ञान सिखा दें, परन्तु यदि वे उनमें सत्य और पवित्रता के प्रति लगन पैदा न कर पायें, तो इसका मतलब यही है कि उन्होंने अपने युवा छात्रों को ऊपर उठाने के बजाए आत्मनाश के मार्ग की ओर प्रवृत्त किया है। गांधीजी यह स्पष्ट तौर पर कहते हैं कि चरित्र के अभाव में ज्ञान बुराई को ही बढ़ावा देनेवाली शक्ति बन कर रह जाती है, जैसा कि हम ऊपर से भले दिखाई देने वाले किन्तु भीतर से चोरी और बेईमानी का धंधा करने वाले अनेक लोगों के मामले में देखते हैं। यही कारण है कि गांधीजी 'चरित्र के बिना ज्ञान' को सात महापापों की श्रेणी में रखते थे।

विश्वविद्यालय में गांधी

युवाओं से संपर्क साधने के उद्देश्य से महात्मा गांधी अक्सर विश्वविद्यालयों में भी जाया करते थे। यहाँ तक कि दक्षिण अफ्रीका से भारत वापसी के बाद महात्मा

गांधी द्वारा पहला यादगार भाषण काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दिया गया जिसकी धमक काफी दूर तक सुनाई दी। 4 फरवरी 1916 को दिए इस भाषण में महात्मा गांधी ने देशज भाषाओं में ज्ञान अर्जन की वकालत की। यही नहीं अपने इस भाषण में उन्होंने सभा में उपस्थित लोगों को स्वच्छता, सादगी, अहिंसा समेत कई मुद्दों पर आईना दिखाने का काम किया। गांधीजी ने निर्भयता पर विशेष बल दिया। उनका मानना था कि बिना मानसिक तौर पर निर्भय हुए अहिंसा के रास्ते पर कोई चल ही नहीं सकता। हालाँकि उनका यह भाषण कइयों को इतना नागवार गुजरा कि वे बीच में ही उठ कर चले गये।

यह ध्यातव्य है कि गांधीजी जब पहली बार अप्रैल 1915 में दिल्ली आये, तो उन्होंने सेंट स्टीफेन्स कॉलेज जाना पसंद किया, जहाँ उन्होंने विद्यार्थियों के बीच अपने दक्षिण अफ्रीका के अनुभवों को साझा किया और ब्रिटिश राज के खिलाफ लड़ने की आवश्यकता पर बल दिया। इसके बाद तो गांधीजी का युवाओं एवं विद्यार्थियों से मिलने का सिलसिला चल पड़ा। वे जहाँ भी जाते, युवा विद्यार्थी उन्हें बड़े चाव से सुनते और उनके भाषणों की चर्चा कई दिनों तक चलती। कालांतर में विद्यार्थियों और युवाओं के बीच महात्मा गांधी इतने लोकप्रिय हो गये कि उनके एक आह्वान पर असहयोग आंदोलन के दौरान हजारों विद्यार्थी स्कूल-कॉलेजों का बहिष्कार कर आंदोलन में शामिल हो गये। ऐसे युवा विद्यार्थियों में क्रांतिकारी भगत सिंह भी थे जिन्होंने असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए 1921 में डीएवी स्कूल छोड़ दिया।

इसी प्रकार जब सविनय अवज्ञा आंदोलन अपने उफान पर था तब महात्मा गांधी 25 फरवरी 1931 को दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दू कॉलेज पहुंचे। देश की एकता कायम रखने के लिए युवा विद्यार्थियों से महात्मा गांधी को काफी उम्मीद थी। हिन्दू कॉलेज में दिए अपने उद्बोधन में गांधीजी स्पष्ट कहते हैं कि बूढ़ों को हिन्दू-मुस्लिम के मुद्दे पर लड़ने दीजिए, क्योंकि उनके हृदय में भीरुताजनित अविश्वास भरा हुआ है। मौत के निकट पहुँच चुके लोगों में ऐसा अविश्वास हो ही जाता है। लेकिन युवा अविश्वास को पास न आने दें और सच्चे मन से हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए काम करें, क्योंकि इस काम के लिए युवा ही सबसे ज्यादा उपयुक्त हैं।

युवाओं के आदर्श

युवा भी महात्मा गांधी को अपना आदर्श माना करते थे। यह अकारण नहीं है कि दक्षिण अफ्रीका से भारत वापस आते ही अनेक युवा महात्मा गांधी और उनके तौर-तरीकों के प्रति सहज ही आकर्षित हुए। यहाँ महात्मा गांधी के दो युवा अनुयायियों का उल्लेख करना यथोचित है। दोनों ही महात्मा गांधी से पहली बार 1916 में मिले और जीवन-पर्यंत उनके अनुयायी बने रहे। उनमें से एक को महात्मा गांधी का आध्यात्मिक उत्तराधिकारी माना जाता है, जबकि दूसरे को उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी के रूप में प्रसिद्धि मिली। हम बात कर रहे हैं विनोबा भावे और जवाहरलाल नेहरू की।

यह ध्यातव्य है कि गांधीजी जब पहली बार अप्रैल 1915 में दिल्ली आये, तो उन्होंने सेंट स्टीफेन्स कॉलेज जाना पसंद किया, जहाँ उन्होंने विद्यार्थियों के बीच अपने दक्षिण अफ्रीका के अनुभवों को साझा किया और ब्रिटिश राज के खिलाफ लड़ने की आवश्यकता पर बल दिया। इसके बाद तो गांधीजी का युवाओं एवं विद्यार्थियों से मिलने का सिलसिला चल पड़ा। वे जहाँ भी जाते, युवा विद्यार्थी उन्हें बड़े चाव से सुनते और उनके भाषणों की चर्चा कई दिनों तक चलती। कालांतर में विद्यार्थियों और युवाओं के बीच महात्मा गांधी इतने लोकप्रिय हो गये कि उनके एक आह्वान पर...।

यह गौरतलब है कि कम ही उम्र में विनोबा का मन औपचारिक शिक्षा से उचट गया और ब्रह्मसाक्षात्कार की मंशा से काशी जाकर वे शास्त्रों का अध्ययन करना चाहते थे। इसी क्रम में जब मार्च 1916 में इंटर की परीक्षा के लिए विनोबा बंबई जा रहे थे, तो वे रास्ते में सूरत में ही उतर गये और वहाँ से काशी की ट्रेन में बैठ गये। जब वे काशी पहुँचे तो वहाँ के अखबारों में गांधीजी द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दिए गये भाषण की चर्चा चल रही थी। वैसे तो इस ऐतिहासिक व्याख्यान को हुए एक महीना हो चुका था, फिर भी नगर में उसकी

शोहरत थी। विनोबा ने जब उनका यह व्याख्यान पढ़ा तो उनके मन में अनेक जिज्ञासाएँ और शंकाएँ उठ खड़ी हुईं। उन्होंने फौरन बापू के नाम एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने अपनी जिज्ञासाएँ प्रकट की। गांधीजी ने उस पत्र का बहुत ही अच्छा जवाब दिया। दस-पंद्रह दिनों के बाद विनोबा ने बापू को एक और पत्र लिखा। इस पर गांधीजी ने विनोबा को लिखा कि 'अहिंसा के बारे में आपने जो जिज्ञासाएँ की हैं उनका समाधान पत्राचार से नहीं हो सकता, इसके लिए जीवन का स्पर्श चाहिए।' और गांधीजी ने विनोबा को कोचरब आश्रम आने का निमंत्रण दिया जिससे कि धीरे-धीरे उनकी जिज्ञासाओं पर बात हो सके।

7 जून 1916 को विनोबा अहमदाबाद स्थित कोचरब आश्रम पहुँचे। बापू को खबर पहुँचायी गयी एक नये भाई आपसे मिलने आए हैं। उन्होंने कहा, ठीक है, नहा-धोकर मुझसे मिलने आयें। नहा-धोकर विनोबा उनके पास पहुँच गये। बापू उस समय सब्जी काट रहे थे। विनोबा के लिए यह एक अचंभित करने वाला दृश्य था। सब्जी काटने-बनाने का काम भी राष्ट्रनेता करते हैं, यह विनोबा ने कभी सुना नहीं था। विनोबा इस मुलाकात के बारे में याद करते हुए लिखते हैं कि 'बापू के प्रथम दर्शन में ही मुझे श्रम का पाठ मिला। बापू ने एक चाकू मेरे हाथ में भी दे दिया। मैंने तो उससे पहले कभी यह काम किया नहीं था। पर उस दिन पाठ मिला। मेरी यह प्रथम दीक्षा थी, जो वहाँ मिली।'

फिर सब्जी काटते हुए ही गांधीजी ने विनोबा से उनकी पृष्ठभूमि के बारे में पूछताछ की। फिर कहा, 'यदि तुम्हें यहाँ का रहन-सहन अच्छा लगता हो और अपना जीवन तुम सेवा-कार्य में लगाना चाहते हो तो यहाँ रहो। मुझे इससे खुशी होगी।' विनोबा की जिज्ञासा उन्होंने परख ली थी। बोले, 'लेकिन तुम बहुत दुर्बल दीखते हो। आत्मज्ञानी साधारणतः शरीर से कमजोर रहते हैं, परंतु तुम तो बीमार दीखते हो। आत्मज्ञानी कभी बीमार नहीं पड़ते।' सामाजिक सेवा में लीन व्यक्ति के लिए उत्तम स्वास्थ्य की महत्ता जताते हुए बापू ने यह दूसरा पाठ विनोबा को दिया जो वे जीवनपर्यंत नहीं भूले।

महात्मा गांधी ने पहली मुलाकात में ही विनोबा की प्रतिभा पहचान ली थी। विनोबा से मुलाकात के बाद महात्मा गांधी उनके पिता नरहर शम्भूराव भावे को लिखे एक पत्र में विनोबा की तारीफ करते हुए लिखते हैं, 'आप के पुत्र ने इतनी अल्प आयु में इतनी आत्मिक उच्चता और वैराग्य भावना प्राप्त कर ली है जितनी मैंने धैर्यपूर्वक इतना परिश्रम करके इतने वर्षों में प्राप्त की है।' यह गांधीजी की पारखी नजर थी जिन्होंने युवा विनोबा को पहचाना और उन्हें बारीकी से गढ़ा। कालांतर में यही विनोबा महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी बने।

इसी प्रकार 1916 का ही साल था जब जवाहरलाल नेहरू पहली बार गांधीजी से मिले। इसका उल्लेख करते हुए नेहरू अपनी आत्मकथा में लिखते हैं, 'मैं गांधीजी से पहले-पहल 1916 में बड़े दिन की छुट्टियों में लखनऊ कांग्रेस में मिला। दक्षिण अफ्रीका में उनकी बहादुराना लड़ाई के लिए हम सब लोग उनकी तारीफ करते थे, लेकिन हम नौजवानों में बहुतों को वह बहुत अलग तथा राजनीति से दूर व्यक्ति मालूम होते थे। उन दिनों उन्होंने कांग्रेस या राष्ट्रीय राजनीति में भाग लेने से इन्कार कर दिया था और अपने को प्रवासी भारतीयों के मसले की सीमा तक बांध रखा था। इसके बाद ही चम्पारण में निलहे गोरों के कारण होनेवाले किसानों के दुःख दूर करने में उन्होंने जैसा साहस दिखाया और उस मामले में उनकी जो जीत हुई, उससे हम लोग उत्साह से भर गये । हम लोगों ने देखा कि वह हिन्दुस्तान में भी अपने इस तरीके से काम लेने को तैयार हैं और उनसे सफलता की भी आशा होती थी।'

नेहरू के कथन से स्पष्ट है कि कैसे गांधीजी अपने अनोखे तौर तरीकों के बावजूद धीरे-धीरे भारतीय युवाओं के बीच अपनी जगह बना रहे थे। नेहरू अपनी एक अन्य किताब 'भारत की खोज' में लिखते हैं कि गांधीजी ताजी हवा के उस प्रबल प्रवाह की तरह थे, जिसने हमारे लिए पूरी तरह फैलना और गहरी सांस लेना संभव बनाया। वह रौशनी की उस किरण की तरह थे, जो अंधकार में पैठ गई और जिसने हमारी आँखों के सामने से परदे को हटा दिया। वह उस बवंडर की तरह से थे, जिसने बहुत-सी चीजों को, खासतौर से मजदूरों के दिमाग को उलट-पुलट दिया। गांधीजी ऊपर से आये हुए नहीं थे, बल्कि हिंदुस्तान के करोड़ों आदमियों की आबादी में से ही उपजे थे। उनकी भाषा वही थी, जो आम लोगों की थी और वह बराबर उस जनता की ओर और उसकी डरावनी हालत की ओर ध्यान आकर्षित करते थे। उन्होंने कहा कि तुम लोग, जो किसानों और मजदूरों के शोषण पर गुजर करते हो, उनके ऊपर से हट जाओ; उस व्यवस्था को, जो गरीबी और तकलीफ की जड़ है, दूर करो। तब राजनैतिक आजादी की एक नई शक्ल सामने आयी और उसमें एक नया अर्थ पैदा हुआ। जवाहरलाल नेहरू के ये उद्‌गार युवाओं के बीच गांधीजी के उत्कर्ष की प्रक्रिया को दर्शाता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम यह देख सकते हैं कि भारतीय युवा हमेशा से गांधीजी के चिंतन का केंद्रबिंदु रहा। यही कारण था कि युवा भी उनके प्रति सहज ही आकर्षित हुए। वर्तमान युवा पाश्चात्य प्रभावों से संचालित है। उसकी सोच निरकुंश है। वह अपने ऊपर किसी का हस्तक्षेप नहीं चाहता है। ऐसी परिस्थितियों में गांधीजी के विचारों की सर्वाधिक जरूरत आज के युवाओं को है। गांधीजी हमेशा युवाओं से रचनात्मक सहयोग की अपेक्षा रखते थे।

गांधीजी ने उस पीढ़ी के युवाओं को भयरहित कर अंग्रेजों के दमन का सामना करने का अद्‌भुत साहस दिया था। वे हमेशा युवा ऊर्जा को सही दिशा देने की बात करते थे। आंदोलन के समय वे युवाओं को हमेशा सतर्क करते रहते थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय उन्होंने कहा था हमारा आंदोलन हिंसा का अग्रदूत न बन जाए इसके लिए मैं हर दंड सहने के लिए तैयार हूँ, यहाँ तक कि मैं मृत्यु का वरण करने को भी तैयार हूँ। उस समय के युवाओं से उनकी अपेक्षा थी कि वे अपनी ऊर्जा और उत्साह को स्वतंत्रता प्राप्ति में सार्थक योगदान की ओर मोड़ें।

गांधीजी ने हमेशा से युवाओं को वंचित समूहों के उत्थान के लिए प्रेरित किया। वो व्यक्तिगत घृणा के हमेशा विरोधी रहे। साथ ही उन्होंने सदैव युवाओं को आत्मप्रशंसा से बचने को कहा है। महात्मा गांधी राष्ट्र निर्माण में युवा वर्ग की जिम्मेदारी व जवाबदेही, बुजुर्गों से ज्यादा मानते थे। क्योंकि बुजुर्गों को जितना देना था, या वे देना चाहते थे, दे चुके; यह युवकों की जिम्मेदारी है कि वे देश को किस दिशा में ले जाना चाहते हैं। इस सिलसिले में गांधीजी युवाओं को यह मूलमंत्र देते हैं कि, 'नौजवानों ! आप चाहे किसी भी स्कूल में हों, किसी भी कॉलेज में हों, सहयोगी अथवा असहयोगी हों, हल्ला-गुल्ला करने में शामिल रहे हों अथवा उसके दु:खी प्रेक्षक रहे हों, मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप अपनी प्राचीन सभ्यता को नहीं छोड़ना, विवेक का त्याग न करना, और गरीबों के प्रति प्रेम भाव को न छोड़ना।' आज के युवा को, चाहे वे किसी भी विचारधारा को मानने वाले हों, किसी भी राजनैतिक पार्टी के समर्थक हों, या फिर किसी भी व्यवसाय में हों, उन्हें गांधीजी के इस मंत्र को दिल से अपनाने की जरूरत है।

संदर्भ सूची

- जवाहरलाल नेहरू, मेरी कहानी (आत्मकथा), नयी दिल्ली: सस्ता साहित्य मण्डल, 1946
- जवाहरलाल नेहरू, भारत की खोज, नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, 1996
- विनोबा भावे, अहिंसा की तलाश: विनोबा की जीवन-झांकी विनोबा के शब्दों में, वाराणसी: सर्व सेवा संघ, 2019

(लेखक गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के शोध अधिकारी हैं।)

संपर्क:

मो. 9717659097

आत्मनिर्भरता की भारतीय संकल्पना और महात्मा गांधी

डॉ. धीरेंद्र प्रताप सिंह

इक्कीसवीं सदी के भारत में आत्मनिर्भरता की बहस आम हो चली है। सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा आत्मनिर्भरता का नारा बुलंद है। हालांकि, आजादी के बाद से ही आत्मनिर्भर भारत हेतु अनेक सरकारी और संवैधानिक प्रयास किए गए। 1960 के दशक के अंतिम वर्षों में अन्न में आत्मनिर्भरता हेतु हरित क्रांति इसका बड़ा उदाहरण है। हरित क्रांति ने अन्न में आत्मनिर्भर तो बनाया लेकिन उसमें रसायनों का उपयोग बहुत बढ़ा। उसका भारतीय स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा। बीसवीं सदी में 90 का दशक आते-आते बहुराष्ट्रीय कंपनियों का जोर इतना बढ़ गया कि आत्मनिर्भरता का भारतीय पाठ उपेक्षित होता गया। आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में महात्मा गांधी की वैचारिकी हाशिये पर जाती दिख रही है।

आत्मनिर्भरता के उद्घोष के बीच महात्मा गांधी का दिया हुआ जंतर किसी राष्ट्र, समाज और उसके नीति-निर्माताओं का सूत्रवाक्य होना चाहिए। गांधी जी ने अपने जंतर में कहा था, जो सबसे कमजोर और गरीब आदमी तुमने देखा हो, उसे याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है? यह जंतर भारत के नीति-निर्धारकों की दृष्टि में कितने और किस रूप में है, यह समझने की जरूरत है। हिंद स्वराज्य में गांधी जी जिस आर्थिक स्वायत्तता की वकालत करते रहे, अपने जीते जी उसे साकार होते तो नहीं ही देख सके। उनका स्पष्ट मानना था कि राष्ट्र की स्वाधीनता की कुंजी है-आर्थिक स्वायत्तता। इस आर्थिक स्वायत्तता का आधार है-गांव, किसान और श्रमिक वर्ग की आर्थिक संपन्नता।

आत्मनिर्भरता के उद्घोष के बीच महात्मा गांधी जी का दिया हुआ जंतर किसी राष्ट्र, समाज और उसके नीति-निर्माताओं का सूत्रवाक्य होना चाहिए। गांधी जी ने अपने जंतर में कहा था, जो सबसे कमजोर और गरीब आदमी तुमने देखा हो, उसे याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा।

इक्कीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में यानी 25 सितंबर 2014 को 'मेक इन इंडिया' नामक योजना को राष्ट्र के स्तर पर आत्मनिर्भरता की दिशा में बड़ी पहल मानी गई। 'मेक इन इंडिया' पहल के तहत ऑटो अवयव, ऑटोमोबाइल, विमानन, जैव प्रौद्योगिकी, रसायन, निर्माण, रक्षा विनिर्माण, विद्युत मशीनरी, इलेक्ट्रॉनिक सिस्टम डिजाइन और निर्माण, खाद्य प्रसंस्करण, आईटी एवं बीपीएम, चमड़ा, मीडिया एवं मनोरंजन, खदान, तेल एवं गैस, फार्मास्यूटिकल्स, बंदरगाहों एवं नौवहन, रेलवे, सड़क एवं राजमार्ग, नवीकरणीय ऊर्जा, अंतरिक्ष, वस्त्र एवं परिधान, थर्मल पावर, पर्यटन और आतिथ्य तथा कल्याण जैसे पच्चीस क्षेत्रों को केंद्र में रखा गया। भारत को आत्मनिर्भरता की जमीन पर खड़ा करने हेतु पांच स्तंभों के नक्शे का परिचय भी दिया गया। वह पांच स्तम्भ थे, अर्थव्यवस्था, बुनियादी ढाँचा, प्रौद्योगिकी, जनसांख्यिकी (डेमोग्राफी) और माँग। यह समस्त प्रयास भारत को आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने का खाका है।

इन सब बातों के मध्य यह बात भी उल्लेखनीय है कि इक्कीसवीं सदी के शुरुआती दो दशक में ही जब वैश्वीकरण की अवधारणा से उपभोक्तावादी संस्कृति और जलवायु परिवर्तन आदि का प्रभाव सामने आया तो अभिजन और लोकजन दोनों संकट में पड़ गए। ऐसे में महात्मा गांधी की जरूरत बढ़ी है। इसलिए भी कि महात्मा गांधी के आत्मनिर्भर भारत की दृष्टि में केवल आर्थिक संकट का समाधान ही नहीं बल्कि मनुष्य होने का अर्थ भी निहित है। प्रकृति और मनुष्य के बीच के रिश्ते की परिभाषा भी शामिल है। राष्ट्र की आत्मनिर्भरता हेतु नीति-निर्धारकों का पूरा जोर अधिकाधिक उत्पादन पर है। अनेक लोगों की धारणा है कि महात्मा गांधी, विकास, तकनीक और उत्पादन-उपभोग के विरोधी थे, जबकि यह धारणा ठीक नहीं है। महात्मा गांधी उत्पादन के विरुद्ध नहीं थे, लेकिन इतना जरूर चाहते थे कि किसी भी उत्पादन में अधिकाधिक लोग शामिल हों।

भारतीय ज्ञान मीमांसा में आत्मनिर्भरता एकल जीवन दृष्टि नहीं जनचेतना और मानवीय सरोकारों का दृष्टांत है। यहां आत्म का अर्थ बहुत विस्तृत भावबोध वाला रहा है। आत्म की व्यापकता के संदर्भ में इसी देश में यह लिखा मिलता है,

अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम् ।

उदारचरितानां वसुधैव कुटुम्बकम्॥

(महोपनिषद्, अध्याय 6, मंत्र 71)

आशय यह है कि यह मेरा अपना है और यह नहीं है, इस तरह की गणना छोटे चित्त वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों की तो (सम्पूर्ण) धरती ही परिवार है।

इक्कीसवीं सदी में अर्थ केंद्रित समाज का निर्माण बहुत तेजी से होता दिख रहा है। आर्थिक नीतियां सामाजिक सरोकारों पर भारी पड़ रही हैं। 'आत्म' शब्द इतना सिकुड़ गया है कि उसमें व्यक्ति केंद्र में आ गया है और समाज का अर्थभाव छूट रहा है। हाशिये वाले मानव समाज का दायरा बढ़ रहा है। गांधी का अंतिम जन अपने हक की लड़ाई में कमजोर साबित हो रहा है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर जोर देने की बात तो खूब जोर-शोर से चल रही है, लेकिन गांवों की अर्थव्यवस्था चरमरा रही है। नई आर्थिक नीतियों के आलोक में ग्रामीण उद्योग, कृषि और प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण होता दिख रहा है। आत्मनिर्भरता की गांधीयन संकल्पना मानो छूट सी गई है। विकास की अवधारणा में उनकी जगह सिकुड़ती जा रही है, जो गांधी के अर्थदर्शन के केंद्र में है। गांधी, सामाजिक-आर्थिक समानता के लिए जिस ट्रस्टीशिप सिद्धांत की बात करते थे, वह भी अमल में नहीं लाया जा सका है।

दरअसल, भारत में जब नई आर्थिक नीतियां लागू की गई तो उसने लघु और कुटीर उद्योगों को संकट में डाल दिया। गांवों की अर्थव्यवस्था ख़राब होने लगी, छोटे-छोटे कामगारों की कमर टूटने लगी तो गांधी की पुस्तक 'हिंद-स्वराज' और उनके विचारों पर केंद्रित संकलित पुस्तक 'मेरे सपनों का भारत' और 'ग्राम-स्वराज्य' जैसी पुस्तकें मार्गदर्शक की भूमिका में आ गई। पूंजी का प्रभाव और उसके प्रभाव से जब अभिजन और लोकजन दोनों संकट में दिखने लगे हैं तो गांधी होने का अर्थ स्पष्ट होने

लगा है। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय समाज में मिश्रित अर्थव्यवस्था लागू हुई, पूंजीवादी और समाजवादी विचारधारा को जगह दी गई, लेकिन गांधी सामाजिक समानता और समरसता के लिए जिस आर्थिकी की बात करते थे, उसे विस्मृत बल्कि कहें सायास छोड़ दिया गया है। गांधी जी का स्पष्ट मानना था कि स्वदेशी अपनाना ही भारतीय अर्थव्यस्था को सुदृढ़ कर सकता है। यह भी कि हमें ऐसी अर्थव्यवस्था का पालन करना चाहिये जिसमें अधिक से अधिक श्रम का प्रयोग हो और वह तभी संभव हैं जब हम श्रम गहन प्रौद्योगिकी को केंद्र में रखेंगे। जबकि इक्कीसवीं सदी की तमाम आर्थिक नीतियां मानव समाज की प्रतिकूल दिशा में हैं और ऐसे में गांधी के आर्थिक विचार बेहद उपयोगी नजर आते हैं। जो मानव समाज के हित में दीर्घकाल तक प्रभावी भूमिका में मौजूद रहेंगे।

आत्मनिर्भरता के संदर्भ में 'सर्वोदय' पुस्तक में 'शरीर-श्रम' शीर्षक लेख में संकलित गांधी जी का यह कथन महत्त्व का है, यदि सब अपनी रोटी के लिए मेहनत करें, तो ऊँच-नीच का भेद दूर हो जाएँ। यदि सब अपने श्रम की रोटी खाएं तो सबके लिए पर्याप्त भोजन और पर्याप्त अवकाश उपलब्ध हो जायेगा। आत्मनिर्भर भारत के लिए तकनीक, संचार और यंत्रों का जिस तरह से अंधाधुंध प्रयोग हो रहा है, उसने लाखों लोगों को संसाधन विहीन और पर निर्भर...।

आत्मनिर्भरता के संदर्भ में 'सर्वोदय' पुस्तक में 'शरीर-श्रम' शीर्षक लेख में संकलित गांधीजी का यह कथन महत्त्व का है, यदि सब अपनी रोटी के लिए मेहनत करें, तो ऊँच-नीच का भेद दूर हो जाए। यदि सब अपने श्रम की रोटी खाएं तो सबके लिए पर्याप्त भोजन और पर्याप्त अवकाश उपलब्ध हो जायेगा। आत्मनिर्भर भारत के लिए तकनीक, संचार और यंत्रों का जिस तरह से अंधाधुंध प्रयोग हो रहा है, उसने लाखों लोगों को संसाधन विहीन और परनिर्भर ही बनाया है। इन स्थितियों में उचित मार्ग क्या हो। 4.11.1925 को यंग इंडिया में महात्मा गांधी ने लिखा है, मशीनों का अपना स्थान है; अपनी उन्होंने जड़ जमा ली है। परंतु उन्हें जरूरी मानव-श्रम का स्थान नहीं लेने देना चाहिए। सुधरा हुआ हल अच्छी चीज है। परंतु यदि संयोग से कोई एक आदमी अपने किसी यांत्रिक आविष्कार द्वारा भारत की सारी भूमि जोत सके और खेती की तमाम पैदावार पर नियंत्रण कर ले और यदि करोड़ों लोगों के पास कोई और धंधा न हो, तो वे भूखों मरेंगे और निकम्मे हो जाने के कारण जड़ बन जाएँगे, जैसे कि आज भी बहुत लोग बन गए हैं। हर क्षण यह डर रहता है कि और भी अनेक लोगों की वैसी ही दुर्दशा हो जाएगी। मैं गृह-उद्योगों की मशीनों में हर प्रकार के सुधार का स्वागत करूँगा। परंतु मैं जानता हूँ कि विद्युत-शक्ति से चलने वाले तकुए जारी करके हाथ से कातने वाले लोगों को हटा देना जुर्म है, यदि इसके साथ करोड़ों किसानों को उनके घरों में कोई धंधा मुहैया करने की हमारी तैयारी न हो।

आत्मनिर्भरता का एक प्रमुख बिंदु है, 'शिक्षा'। किसी भी आत्मनिर्भर राष्ट्र की बुनियाद होती है शिक्षा। शैक्षिक उन्नति किसी राष्ट्र की तस्वीर बदल देती है। हिंदुस्तान में मैकाले की शिक्षा पद्धति आज भी प्रश्नांकित होती है। आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ता भारत का कदम शिक्षा की व्यवहारिकता को नजरअंदाज करके पीछे ही होगा। शिक्षा कैसी हो, इस हेतु पर विचार करते हुए अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज' में महात्मा गांधी ने लिखा, मैं भूगोल-विद्या सीखा, खगोल-विद्या (आकाश के तारों की विद्या) सीखा, बीजगणित (एलजब्रा) भी मुझे आ गया, रेखागणित (ज्योमेट्री) का ज्ञान भी मैंने हासिल किया, भूगर्भ विद्या को भी मैं पी गया। लेकिन उससे क्या? उससे मैंने अपना कौन सा भला किया? अपने आसपास के लोगों का क्या भला किया? किस मकसद से मैंने वह ज्ञान हासिल किया? उससे मुझे क्या फायदा हुआ? एक अंग्रेज विद्वान (हक्सली) ने शिक्षा के बारे में यों कहा है-उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके वश में रहता है, जिसका

शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शुद्ध, शांत और न्यायदर्शी (इन्साफ को परखनेवाली) है। उसने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इन्द्रियाँ उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनायें बिलकुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपने जैसा मानता है।

भारत के संदर्भ में राष्ट्रीय स्तर पर आत्मनिर्भरता का मुद्दा जब भी सामने आता है तो भारत के गांव सामने आ जाते हैं। गांव यानी किसान, गांव यानी किसानी। गांव यानी ग्रामीण रोजगार। ग्रामीण युवा। ग्रामीण शिक्षा, स्वास्थ्य और सशक्तिकरण। गांव इसलिए भी कि भारत के भूगोल में गांवों का बड़ा हिस्सा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में खेती किसानी की अहम भूमिका है। लेकिन, इक्कीसवीं सदी के भारत में गांवों से पलायन तेजी से हुआ है। खेती किसानी से मोहभंग हुआ है। ग्रामीण स्तर पर भी लघु और कुटीर उद्योग बुरी तरह प्रभावित हुआ है। गांवों की आर्थिक संरचनाएं टूट रही हैं। इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में प्रकाशित अपनी पुस्तक बदलता गांव बदलता देहात में सत्येंद्र कुमार लिखते हैं, भारत को एक कृषि प्रधान देश कहा जाता है, परंतु पिछले दशकों में देश की अर्थव्यवस्था में खेती का योगदान घटकर चौदह फीसदी से कम रह गया है।... खेती से आमदनी न बढ़ने और घरेलू खर्चों में लगातार वृद्धि से किसानों की निराशा और उन पर कर्ज दोनों बढ़े हैं। ग्रामीण जीवन में खुशी के स्थान पर चिंता का भाव पसरा हुआ है। ग्रामीण भारत चिंतित, बेचैन और गमगीन है।

यहां सवाल इस बात का है कि आत्मनिर्भर भारत की बहस में कमजोर होते जा रहे भारतीय गांवों को कैसे नजरअंदाज किया जाय। महात्मा गांधी ने जिस ग्राम स्वराज्य की बात को प्रमुखता दी, वह आत्मनिर्भर भारत की दिशा में गौरतलब है। ग्राम स्वराज पुस्तक में गांधी जी ने लिखा है, ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी महत्त्व की जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा; और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस तरह हर एक गाँव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले। उसके पास इतनी फाजिल जमीन होनी चाहिए, जिसमें ढोर चर सकें और गाँव के बड़ों व बच्चों के लिए मनबहलाव के साधनों और खेलकूद के मैदान वगैरा का बंदोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बची तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसलें बोयेगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ उठा सके; यों वह गांजा, तम्बाकू, अफीम वगैरा की खेती से बचेगा। हरएक गाँव में गाँव की अपनी एक नाटकशाला, पाठशाला और सभा-भवन रहेगा। पानी के लिए उसका अपना इन्तजाम होगा वाटरवर्क्स होंगे जिससे गाँव के सभी लोगों को शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालाबों पर गाँव का पूरा नियंत्रण रखकर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीम के आखिरी दर्जे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी।

गांव यानी किसान, गांव यानी किसानी। गांव यानी ग्रामीण रोजगार। ग्रामीण युवा। ग्रामीण शिक्षा, स्वास्थ्य और सशक्तिकरण। गांव इसलिए भी कि भारत के भूगोल में गांवों का बड़ा हिस्सा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में खेती किसानी की अहम भूमिका है। लेकिन, इक्कीसवीं सदी के भारत में गांवों से पलायन तेजी से हुआ है। खेती किसानी से मोहभंग हुआ है। ग्रामीण स्तर पर भी लघु और कुटीर उद्योग बुरी तरह प्रभावित हुआ है। गांवों की आर्थिक संरचनाएं टूट रहीं हैं। इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में प्रकाशित अपनी पुस्तक बदलता गांव बदलता देहात में सत्येंद्र कुमार लिखते हैं, भारत को एक...।

ग्राम स्वराज्य नामक इस पुस्तक में अध्याय 14 से अध्याय 28 (14. खेती और पशुपालन-1, 15. खेती और पशुपालन-2, 16. खेती और पशुपालन-3, 17. खेती और पशुपालन-4, 18. खेती और पशुपालन-5, 19. खादी और कताई, 20. अन्य ग्रामोद्योग- दूध का उद्योग, हाथकुटा चावल और हाथपिसा आटा, मिल का तेल और धानी का तेल, गुड़ और खांड़सारी,

मधुमक्खी–पालन, चमड़े का धंधा, साबुन, हाथ–बना कागज, स्याही, 21. गाँवों का यातायात, 22. मुद्रा, विनिमय और कर, 23. गाँवों की सफाई, 24. गाँवों का स्वास्थ्य, 25. आहार, 26. गाँव की रक्षा, 27. ग्रामसेवक, 28. सरकार और गाँव तक ग्रामीण सशक्तिकरण की दृष्टि से विशेष महत्त्व का है। इन अध्यायों से गुजरते वक्त आत्मनिर्भर गांव के मायने को बखूबी समझा जा सकता है।

'डाउन टू अर्थ' पत्रिका के मई 2020 अंक में प्रकाशित रमेश शर्मा का आलेख 'आत्मनिर्भरता के अर्थ और अनर्थ', आत्मनिर्भर भारत और गांधी की भूमिका के संदर्भ में एक दृष्टिसम्पन्न आलेख है। इस आलेख में वह लिखते हैं, आत्मनिर्भरता का आधार 'संसाधनों और अवसरों के समान वितरण' के दर्शन और आचरण से ही संभव है। आधी आबादी को राज्यतंत्र पर निर्भर कर देना, भारत जैसे महादेश में आत्मनिर्भरता का अधूरा प्रयोग ही साबित हुआ है। वास्तव में "आत्मनिर्भरता का अर्थ राज्यतंत्र पर निर्भरता नहीं है" इस बुनियादी सत्य को स्वीकार्य किए बिना कोई भी नया प्रयोग, अनर्थकारी सिद्ध हो सकता है, इसकी पूरी संभावना है और रहेगी। आत्मनिर्भरता अपनाने के लिये जिस साहस की जरूरत है क्या उसके लिये सरकार और समाज तैयार है? इस प्रश्न का औसत उत्तर है, नहीं। फिलहाल समाज और राज्य की सार्वजनिक निर्भरता जिस बाजार और आर्थिक प्रतिष्ठानों पर है, वही आत्मनिर्भरता के बुनियादी अनुशासन और आचरण के लगभग खिलाफ हैं।

इक्कीसवीं सदी के आत्मनिर्भर भारत की बहस और परिणाम से यह बात शिद्दत से महसूस की जा सकती है कि मौजूदा दौर में आत्मनिर्भर भारत हेतु किए जा रहे प्रयासों में परंपरागत भारतीय ज्ञान मीमांसा और महात्मा गांधी की दृष्टि का सम्मिलन संभव होता नहीं दिख रहा है। ऐसा इसलिए भी कि जिस भूमंडलीय संस्कृति से प्रेरित इक्कीसवीं सदी की आर्थिकी निर्मित होती चली आ रही है, उससे आत्मनिर्भरता की भारतीय संकल्पना को भारी क्षति पहुंची है। समरस समाज हेतु संसाधनों के समान वितरण, उपभोग की सीमा और अवसर की समान उपलब्धता की स्थिति चिंताजनक है। जिसकी ओर महात्मा गांधी की दृष्टि बार–बार जाती थी। यह बात उतनी ही महत्वपूर्ण है कि भारतीय मनीषी महात्मा गांधी की आत्मनिर्भर भारत की जो दृष्टि थी, उसे विस्मृत करके या हाशिए पर रखकर आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना अधूरी सी है।

संदर्भः

- डॉ. प्रभाकर माचवे (1991): गांधी जी के आश्रम में. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद्: नई दिल्ली। पृ. स. iv
- https://amritmahotsav.nic.in@aatmanirbhar&bharat&hi-html
- भारतन कुमारप्पा (सं.)(1955):सर्वोदय। नवजीवन मुद्रणालय:अहमदाबाद। पृ.सं.37(सर्वोदय। www.mkgandhi.org)
- भारतन कुमारप्पा(सं.) (1955): सर्वोदय. नवजीवन मुद्रणालय: अहमदाबाद। पृ. सं. 64 (सर्वोदय। www.mkgandhi.org)
- महात्मा गांधी (1949): हिंद स्वराज। नवजीवन मुद्रणालय: अहमदाबाद। पृ. सं. 89
- सत्येंद्र कुमार (2018): बदलता गांव बदलता देहात. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली, भारत। पृ. सं. 7
- हरिप्रसाद व्यास (सं.) (1963): ग्राम–स्वराज्य. नवजीवन मुद्रणालय: अहमदाबाद। पृ. सं. 50 (ग्राम–स्वराज्य| www.mkgandhi.org)
- https://www.downtoearth.org.in/hindistory/economy/rural-economy/rhetoric-and-reality-of-self-reliance-71208

संपर्कः

आर. के. नगर, नवाडीह
अलकारी देवी अस्पताल के सामने
धनबाद (झारखण्ड)

गांधी, सुभाषचंद्र बोस एवं डॉ. आंबेडकर की प्रतिबद्धताएँ

प्रो. कन्हैया त्रिपाठी

भारतीय स्वाधीनता का इतिहास बहुत रोमांचकारी रहा है। इसमें सबके अपने-अपने तरह के त्याग हैं। महात्मा गांधी ने भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन को जो गतिशीलता 1915 में अपने भारत वापसी के बाद पूरे भारत का भ्रमण करके दी, वह नि:संदेह सबके बीच प्रतिष्ठा प्राप्त है। सबकी अपनी निष्ठा के बीच भारत के ऐसे अनेक नायक अपना नाम इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित करते हैं। महात्मा गांधी के साथ सुभाषचंद्र बोस और डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर का नाम भी बहुत आदर के साथ लिया जाता है। इन तीनों में मतभेद भी थे लेकिन मनभेद नहीं थे। सबके अपने-अपने तरह के विचार ही, इन तीनों को एक दूसरे से उन्हें भिन्न बनाते हैं। लेकिन एक बात यह माननी पड़ेगी कि चाहे महात्मा गांधी हों, सुभाषचंद्र बोस हों या डॉ. आंबेडकर सबका यह उद्देश्य था कि भारत को स्वाधीन होना चाहिए।

वैचारिक साम्यता

महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस और डॉ. आंबेडकर के वैशिष्ट्य को समझना आवश्यक है। प्रतिरोध की संस्कृति भी इन तीनों की मनुष्यता की स्थापनार्थ थी। उनके हेतु एक थे। उनके संघर्ष की कथाएं भले ही उन्हें अलग-अलग करती हों लेकिन स्वाधीनता के लिए संघर्ष के लिए मतैक्यता थी। सेसिल ई हिनशा ने एक महत्त्वपूर्ण बात की थी कि 'मानवीय संबंधों के विषय में किसी विशेष उद्देश्य का होना उसके महत्व पर निर्भर है।'[1] तत्कालीन परिस्थितियां कुछ इसी प्रकार की थी कि सभी मनुष्यता की स्वतंत्रता, गरिमा और प्रतिष्ठा के लिए समर्पित थे। सुभाष चंद्र बोस ने कहा था, अपने देश की आजादी के लिए मर-मिटना हमारे खून में ही लिखा होता है। हमें अपनी ताकत के बल पर ही इस आजादी को कायम रखना है।[2] गांधी और बाबासाहेब ने एक-दूसरे से कुछ प्रेरणा भी ली है। वरिष्ठ विचारक रावसाहेब कस्बे का कहना है कि दोनों ने अपनी-अपनी भूमिकाएँ बरकरार रखीं, फिर भी परस्पर अनुभवों के साथ अपने क्षितिज को व्यापक बनाया। इंग्लैंड में हाउस ऑफ कॉमन्स के सांसद भीखू पारेख ने अपनी किताबों में इस प्रकार लिखा है, 'अंबेडकर और गांधी दोनों को एक-दूसरे का पूरक माना जाना चाहिए। क्योंकि दोनों ने एक ही काम को अपने अलग-अलग स्टाइल में किया। दोनों भारतीय जाति व्यवस्था और समाज के

महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस और डॉ. आंबेडकर के वैशिष्ट्य को समझना आवश्यक है। प्रतिरोध की संस्कृति भी इन तीनों की मनुष्यता की स्थापनार्थ थी। उनके हेतु एक थे। उनके संघर्ष की कथाएं भले ही उन्हें अलग-अलग करती हों लेकिन स्वाधीनता के लिए संघर्ष के लिए मतैक्यता थी। सेसिल ई हिनशा ने एक महत्त्वपूर्ण बात की थी कि 'मानवीय संबंधों के विषय में किसी विशेष उद्देश्य का होना उसके महत्व पर निर्भर है। तत्कालीन परिस्थितियां कुछ इसी प्रकार की थीं...।

दृष्टिकोण में बदलाव लाना चाहते थे और दोनों ने धीरे-धीरे इसे पूरा भी किया।[3]

डॉ. आंबेडकर तर्कशील थे। वह मनुष्यता को प्राथमिकता देते थे। गांधी के मानवीय होने और उसे बरतने का अच्छा उदाहरण उनके सत्य और अहिंसा का आचार है। गांधी की ही भांति आंबेडकर का पूरा इतिहास खंगालें तो यही मिलता है कि उन्होंने कभी भी हिंसा का पक्ष नहीं लिया। सुभाष की अहिंसा की सभ्यता गीता प्रेरित लगती है जिसमें अर्जुन को कृष्ण अधिकतम शांति की स्थापनार्थ युद्ध करने के लिए प्रेरित करते हैं। कर्त्तव्यबोध के स्तर पर भी गांधी, सुभाष और डॉ. आंबेडकर कहीं न कहीं मनुष्यता के बने रहने की लड़ाई लड़ते हुए मिलते हैं। एक बार डॉ. आंबेडकर ने कहा था, 'महानता केवल संघर्ष और त्याग से हासिल की जा सकती है। अग्नि परीक्षा दिए बिना न तो मनुष्यता प्राप्त की जा सकती है और न ही देवत्व।[4] यह अग्नि परीक्षा ही तो थी जिसे गांधी, आंबेडकर, सुभाष ने अपने अपने तरीके से दी। राजमोहन गांधी लिखते हैं कि गांधी व्यक्ति को समाज के केंद्र में रखते थे। इसके साथ ही वह उद्धरण भी पेश करते हैं-मैं चाहता हूँ कि सभी व्यक्ति समाज के मजबूत और पूर्ण विकसित सदस्य बनें।[5] व्यक्ति को केंद्र में रखना भी निःसंदेह वैचारिक साम्यता रही है चाहे वह गांधी हों, आंबेडकर या सुभाष बाबू।

सुभाषचंद्र बोस और गांधी के बारे में विश्वप्रकाश गुप्त एवं मोहिनी गुप्ता अपनी पुस्तक 'सुभाषचंद्र बोस व्यक्ति एवं विचार' में लिखते हैं, गांधी जी के सामाजिक राजनीतिक दर्शन में आध्यात्मिक और नैतिक अनुशासन का भारी महत्व है। सत्याग्रही के लिए प्रथम कोटि के आत्मिक बल की आवश्यकता है। अनुशासन की आग में तपे बिना सत्याग्रही यह आत्मिक बल नहीं पा सकता। गांधी जी की भांति ही सुभाषचंद्र बोस में भी अनुशासन की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी।[6] गांधी एवं सुभाष की भांति डॉ. आंबेडकर की अनुशासन-शक्ति थी जिसकी वजह से वे चाहे सत्याग्रह की आंच पर तपना हो चाहे यत्न के माध्यम से उच्च शिक्षा और अन्य जीवनोद्देश्य ग्रहण करना, इसमें वह सफल व्यक्तित्व की तरह हमें मिलते हैं।

द्वंद्व का भौतिक सत्यापन

यह ऐतिहासिक प्रश्न होगा कि वैचारिक साम्यता के साथ द्वंद्व कितने थे? गांधी ने अपने पूरे जीवनकाल में निवर्तमान परिस्थितियों के साथ समझौता नहीं किया। आंबेडकर कोई कम नहीं थे वे भी अडिग थे और सुभाष बाबू तो अपनी निष्ठा से कभी डिगे नहीं। ऐसे में इन तीनों विभूतियों के बीच मतैक्यता बार-बार प्रश्नांकित हुई। वैचारिक साम्यता को सार्वभौमिक पैमाने पर देखने की कोशिश करें तो वह साम्यता भी थी जिसका पूर्व में जिक्र किया गया लेकिन द्वंद्व के अनेक कारण थे जो कि उनकी अपनी-अपनी दृष्टि और प्रतिबद्धताओं के कारण बार-बार उपजे। समन्वय के लिए विभिन्न यत्न के उदाहरण भी हैं जिसका इतिहास में खूब वर्णन है। जाति के प्रश्न, धर्म के प्रश्न और तात्कालिक परिथितियों के विभिन्न चुनौतीपूर्ण विषय पर इन तीनों के द्वंद्व मिलते हैं। यथा धनञ्जय कीर ने अपनी पुस्तक में सुभाष बाबू और डॉ. आंबेडकर की मुलाकात का जिक्र किया है, इसे डॉ. आंबेडकर वांगमय के 36वें खंड में पढ़ा जा सकता है कि जब सुभाष चंद्र बोस को कांग्रेस के अध्यक्ष पद से हटा दिया गया था तब वे बेचैन से थे। वह भारतीय फौज को ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष के लिए संगठित कर रहे थे, जो यूरोप में जीवन-मरण की लड़ाई में उलझी थी। सुभाष बाबू ने बम्बई आकर जिन्ना, आंबेडकर और सावरकर से 22 जुलाई, 1940 को मुलाकात की।[7] इसी के साथ यह लिखा है कि सुभाष चंद्र बोस प्रस्तावित संघ को स्वीकार करने के एकदम खिलाफ थे, और चूंकि डॉ आंबेडकर भी इसके विरोधी थे इसलिए सुभाष बाबू ने इसे उनके साथ एकजुट होने का अवसर जाना होगा। संघ के मुद्दे पर विचार-विमर्श के बाद, डॉ. आंबेडकर ने सुभाष बाबू से पूछा कि क्या वह

चुनाव में कांग्रेस के विरुद्ध अपने उम्मीदवार खड़े करेंगे। उनका उत्तर नकारात्मक था। तब डॉ. आंबेडकर ने सुभाष बाबू से पूछा कि अछूतों की समस्या पर उनकी पार्टी का सकारात्मक दृष्टिकोण क्या होगा। सुभाष बाबू के पास कोई युक्तिसंगत उत्तर नहीं था, अत: बातचीत वहीं समाप्त हो गई।[8] डॉ. आंबेडकर एवं सुभाष बाबू के बारे में चाहे जो भी तर्क गढ़े जाएँ लेकिन सुभाषचंद्र बोस अपने पक्ष को लेकर बहुत स्पष्ट थे। वह समझौता करने से बचे और उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा से अधिक तत्कालीन देश की जरूरत को ध्यान दिया, यदि ऐसा कहा जाए, तो कोई अतिशयोक्तिपूर्ण बात नहीं होगी। गांधी की अहिंसक सभ्यता के समक्ष भी बोस ने अपना मत सदैव स्पष्ट रखा। वह पुराने जितने भी गिले-शिकवे थे उसे दरकिनार करते हुए अपनी प्रतिबद्धताओं के लिए आज स्मरण किए जाते हैं। यथा, 19 फरवरी, 1942 को आजाद हिन्द रेडियो से सुभाषचंद्र बोस ने बहुत बुलंद आवाज में कहा था, भारत की मुक्ति का समय निकट आ गया है। भारत अब उठेगा और दासता की उन जंजीरों को तोड़ेगा जिन्होंने उसे इतने लंबे समय तक बांधे रखा है। भारत की मुक्ति से एशिया और विश्व मानव मुक्ति के बड़े लक्ष्य की ओर हम आगे बढ़ेंगे।[9] सुभाष ने अपनी पारदर्शी जीवन शैली को संगठनिक चेतना बनाने की सदैव कोशिश की। गोलमेज सम्मलेन में प्रतिभागिता को लेकर जब सुभाषचंद्र बोस ने गांधी की आलोचना की तो तरह-तरह की बातें हुई। 1938 के कांग्रेस अध्यक्ष जैसे पद पर चयन के बाद पट्टाभि सीतारमैय्या के साथ गांधी के अपने समीकरण थे, सब जानते हैं। 29 अप्रैल, 1939 को सुभाष बाबू ने इस्तीफा दिया, इस द्वंद्व का साक्षी इतिहास है। नि:संदेह अपनी-अपनी प्रतिबद्धताओं की वजह से यह द्वंद्व उस दौर में सुभाष और गांधी के बीच देखने को मिलते हैं। 21 जून, 1939 को लिखे पत्र से पता चलता है कि सुभाष की भीतरी ताकत कितना धैर्य के साथ कार्य कर रही थी। उन्होंने अपने किये पर सदैव गर्व किया और यह नहीं कहा कि इससे हमारी लोकप्रियता का क्या होगा। वह खुद उस पत्र में कहते हैं कि वह ज्यादा लोकप्रिय हुए हैं। सुभाष जी ने लिखा, भारत एक अद्‌भुत देश है, जहाँ व्यक्ति इसलिए लोकप्रिय नहीं होता कि उसके हाथ में शक्ति है, बल्कि वह पद छोड़ दे तो लोकप्रिय होता है। उदाहरण के लिए इस बार लाहौर में मेरा पहले, जब मैं कांग्रेस अध्यक्ष था, की अपेक्षा अधिक जोरदार स्वागत हुआ।[10]

सुभाष के लिए जितना कठिन था तत्कालीन परिस्थितियों से जूझना डॉ. आंबेडकर के संघर्ष में समानता, समरसता, अस्पृश्यता से मुक्ति और अधिकारपूर्ण मानव जीवन के लिए यत्न सम्मिलित थे। यहाँ उन विषयों पर चर्चा करना ठीक नहीं है जो पहले से विमर्श के केंद्र में रहे हैं। यदि कुछ नया खंगालने का यत्न किया जाये तो 5 फरवरी, 1940 के डॉ. आंबेडकर के वक्तव्य को देखें। उन्होंने एक महत्त्वपूर्ण बात कही थी, 'मैं गांधी जी और कांग्रेस से सहमत नहीं हूँ जब वे यह कहते हैं कि भारत एक राष्ट्र है। मैं मुस्लिम लीग की विदेश संबंधी समिति के इस कथन से भी सहमत नहीं हूँ कि एक राष्ट्र के रूप में हिन्दुओं और मुसलमानों को जोड़ा नहीं जा सकता....मेरा मानना है कि हम एक राष्ट्र नहीं हैं। परन्तु मुझे इस बात की पूरी आशा है कि हम एक राष्ट्र हो सकते हैं बशर्ते सामाजिक समरसता की समुचित प्रक्रिया की शुरुआत की जाए।[11] डॉ. आंबेडकर के ऐसे कई आरोप हैं जो गांधी के लिए लोगों के मन में सवाल पैदा करते हैं। लेकिन गांधी का अपना कैनवस है जिसमें वह अपनी प्रतिबद्धताओं को दूसरों के द्वारा प्रकट करवा देते हैं। यथा, वियोगी हरि ने अपनी पुस्तक 'अस्पृश्यता' में लिखा है कि गांधी जी ने कहा कि अस्पृश्यों को यदि हिन्दू समाज से अलग करने का प्रयत्न किया गया तो मैं उसका मुकाबला अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी करूंगा। अन्य अल्पसंख्यक जातियों के दावे को तो मैं समझ सकता हूँ, लेकिन अछूतों की तरफ से पेश किया गया अलगाव का दावा तो मेरे लिए सबसे

भारत की मुक्ति से एशिया और विश्व मानव मुक्ति के बड़े लक्ष्य की ओर हम आगे बढ़ेंगे।' सुभाष अपनी पारदर्शी जीवन शैली को संगठनिक चेतना बनाने की सदैव कोशिश की। गोलमेज सम्मलेन में प्रतिभागिता को लेकर जब सुभाषचंद्र बोस ने गांधी की आलोचना की तो तरह-तरह की बातें हुई। 1938 के कांग्रेस अध्यक्ष जैसे पद पर चयन के बाद पट्टाभि सीतारमैय्या के साथ गांधी के अपने समीकरण थे, सब जानते हैं। 29 अप्रैल, 1939 को सुभाष बाबू ने इस्थीपा दिया, इस द्वंद्व का साक्षी इतिहास है।

बड़ा निर्दय घाव है। इसका मतलब यह हुआ कि अछूतपन का कलंक हमेशा के लिए कायम रहने वाला है। भारत की आजादी हासिल करने के लिए भी मैं अछूतों के सच्चे हित को बेचने वाला नहीं। मैं खुद अछूतों के विशाल समुदाय का प्रतिनिधि होने का दावा करता हूँ।[12]

जीवन छंद से जुड़ा है जनवरी

यह जो संवेदना है इसकी अपनी धरातल है। कदाचित एक मत नहीं थे गांधी, सुभाष और डॉ. आंबेडकर लेकिन द्वंद्व के धरातल पर उनकी प्रतिबद्धताओं की कसौटी यदि परखी जाए तो वे सभी सम्मानजनक स्थिति में ही देखी व समझी जाएँगी। यह जनवरी का महीना इन तीनों के लिए विशेष है। ये सभी समकालीन रहे लेकिन इस विशिष्ट मास में सुभाष जी का जन्मदिवस पड़ता है। डॉ. आंबेडकर के लिए यह माह जुड़ा हुआ है क्योंकि 26 जनवरी 1950 को हमारा संविधान लागू हुआ, हम सब जानते हैं कि डॉ. आंबेडकर का संविधान से क्या रिश्ता रहा है। और राष्ट्रपिता की शहादत तिथि 30 जनवरी को पड़ती है। इस दृष्टि से इन तीनों महापुरुषों का ऐतिहासिक जीवन द्वंद इस महीने में हम सबके समक्ष आता ही आता है। प्रतीकात्मक रूप से ही सही, इस माह में हमारे यह तीनों महापुरुष स्मरण किये जाते हैं जिनकी प्रतिबद्धताओं के केंद्र में मनुष्य रहा है, भारत की गरिमा व अस्मिता रही है। वैचारिक मतभेद, वैचारिक द्वंद्व के साथ गांधी, सुभाष और डॉ. आंबेडकर, तीनों ने सार्वभौमिक स्तर पर जो सोचा और किया, उसका परिणाम है कि हम आज एक संविधान की गरिमा के साथ स्वतंत्र देश में आजादी के अमृत पड़ाव को पार करके विकसित देश बनाने की दिशा में सतत प्रयत्नशील हैं।

आज जब हमारी वैश्विक चुनौतियाँ नए रूपों में अपना उपनिवेश सा कायम करना चाहती हैं तो इन तीनों के संघर्ष, कालजयी विचार और नेतृत्व से सीखने को बहुत कुछ शेष है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इनके वैचारिक विभेद को अलग करके इनके सकारात्मक सोच को ज्यादा समझने की कोशिश करें और यह समझें कि वे स्थायी शांति के लिए, जीवन-यापन के लिए, भारतीय उत्थान के लिए और अपनी गतिशीलता के लिए क्या यत्न किए और हम उस दिशा में क्या कर सकते हैं। नि:संदेह गांधी, सुभाषचंद्र बोस और डॉ. आंबेडकर की अपनी अपनी अनुपस्थिति में जो उपस्थिति है उसे आत्मसात करके भारत के लिए ही नहीं पूरी दुनिया के लिए हम बहुत कुछ कर सकते हैं।

सन्दर्भ:

1. सेसिल ई हिनशा, अहिंसात्मक प्रतिरोध, अनु। लक्ष्मी नारायण गर्दे, अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी, 1960, पृष्ठ 80
2. जिनसे सीखा हमने आजादी का मोल, न्यू इण्डिया समाचार, 16-21 अगस्त, 2021, पृष्ठ-32
3. https://incAin/congress-sandesh/tribute/why-was-there-tension-between-gandhi-and-ambedkar
4. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर संपूर्ण वांग्मय, खंड। 36, पृष्ठ 18
5. राजमोहन गांधी, भूमिका, जाति विरुद्ध गांधी
6. विश्वप्रकाश गुप्त एवं मोहिनी गुप्ता, 'सुभाषचंद्र बोस व्यक्ति एवं विचार', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997, पृष्ठ। 264
7. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर संपूर्ण वांग्मय, पृ. 36, खण्ड 36
8. वही
9. सुभाषचंद्र बोस, दी इन्डियन स्ट्रगल, 1920-42, नेताजी रिसर्च ब्यूरो, एशिया पब्लिशिंग हॉउस, न्यू यॉर्क, 1964, पृष्ठ 411
10. सुभाषचंद्र बोस के दस्तावेज भाग-1, संपादक डॉ. प्रभाष कुमार, भव्या पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, पृष्ठ 394
11. बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर संपूर्ण वांग्मय, पृष्ठ 35 याद टाइम्स ऑफ इंडिया, मंगलवार, 6 फरवरी, 1940
12. वियोगी हरि, अस्पृश्यता, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, 1969, पृष्ठ 52

(लेखक भारत के राष्ट्रपति जी के विशेष कार्य अधिकारी रह चुके हैं)

संपर्क:

चेयर प्रोफेसर, डॉ. आंबेडकर चेयर, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा-151401

मो. 9818759757

स्मृति-तर्पण

बैकुंठनाथ पट्टनायक

इस कालनेमि दल ने तुम्हारी भूमि में,
अपने कौशल से तुम्हें मार दिया,
कालाबाजारी इस भूमि में आज प्रभु बनकर बैठी है,
तुम्हारे चले जाने के बाद इन्होंने सब कुछ बिगाड़ दिया
तुम्हारे गले की माला और वस्त्र,
दिखाने के लिए सार वस्तु बन गई हैं।
लेकिन चारों तरफ सिर्फ अंधकार और हाहाकार है,
जिधर देखो, उधर चल रही है रुक्ष दानव की लीला,
झरना सूख गया और दिखाई पड़ते हैं कंकड़-पत्थर।
आर्त्त जनता के लिए कहीं भी,
एक बूंद आंसू किसी के नयन में दिखाई नहीं पड़ता,
जिधर देखो, उधर घूम रहा है स्वार्थ, अहंकार का स्त्रोत ।
राजनीति जीवन को ठेलकर आँखमिचौनी खेलती है, खा
जाओ स्वाधीनता के नाम से जितना खा सको।
मुख में मैत्री और सत्य का नाम लेकर,
चतुरता के साथ पीछे से ढेला मारो।
तुम्हारे खून से स्वाधीनता को पाकर,
तुम्हारी स्मृति को कौशल से, भेज दिया संग्रहालय में।
तुम्हारे नाम से लीला कीर्तन में उन्मत्त होकर,
देश की आत्मा को पीछे से, कौशल से काट दिया।
सत्याग्रह के गौरव को नीचा किया,
और मंत्र-बाण छोड़कर साम्य का गला घोट दिया
अंधी जनता निराश होकर देखती है,
इस स्वाधीन देश में रास्ता ढूंढ़ती है, रास्ता कहां है।
तुम्हारा निर्देश-पथ कहीं खो गया,
आज नकली मयूर बनकर नाचते हैं कितने,
कुहुक सृष्टि-सर्जना कर।
आज बापूजी के बदले देश में लाख-लाख बापू,
बहाते हैं प्राणहीन आंसुओं की बूंदें ।

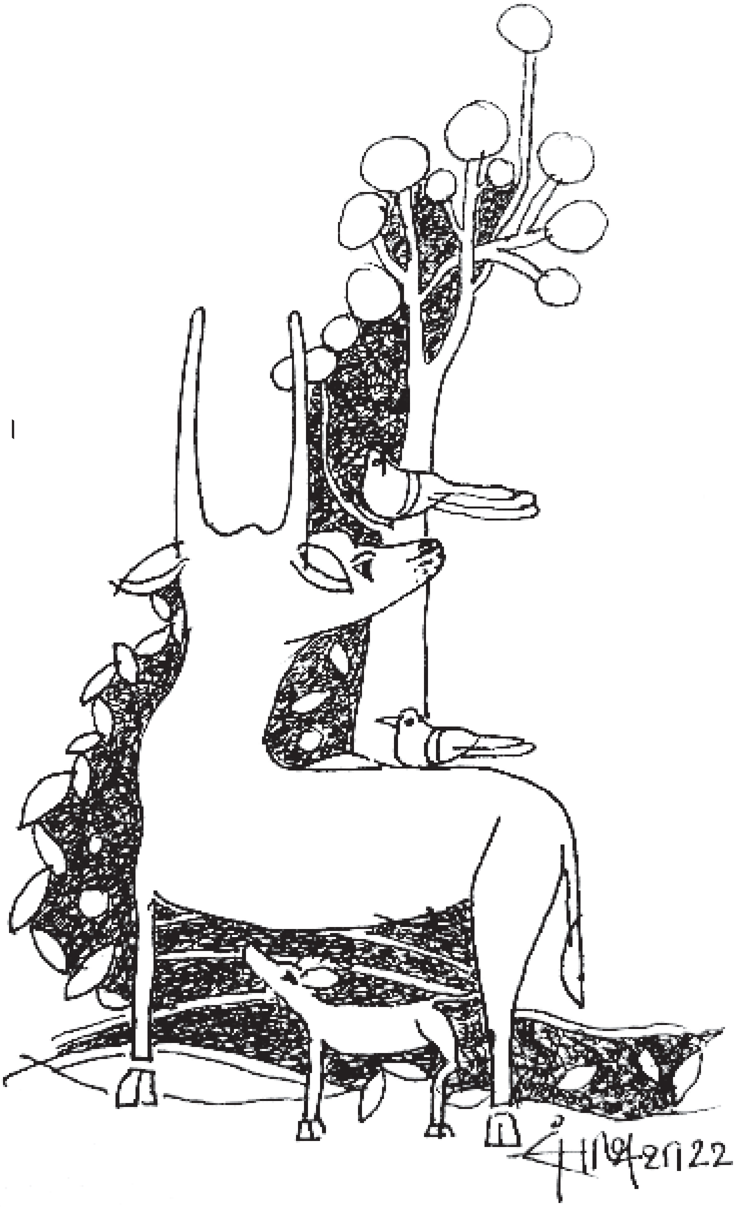

अंधेरे पथ में सुनाई नहीं पड़ता,
दृढ़ लाठी की ठक-ठक आवाज,
अर्जित धन को खो देंगे,
यह जितना धर्म बगुला है।

भस्म स्तूप से मृत्यु का उपहास कर,
हे पूर्ण ब्रह्मचारी, जागृत हो जाओ।

सत्य, निष्ठा, पौरुष और सरलता,
विपथगामी को फिर अपनी बात सुना दें।

तुम्हारे झंडे को जो लोग पकड़े हुए हैं,
उनकी पुरुषत्वहीनता हरण कर सत्य मंत्र से,
उनको उद्दीप्त करो, फिर आरम्भ करो दांडी यात्रा,
गुणी लोग एकत्रित होने से, खूनी लोग अपने आप चुप
हो जाएंगे,
दृढ़तर होकर जाति आगे पांव बढ़ाएगी, वीर सन्यासी
फिराकर ले आएंगे हमारा गौरव,
तुम्हारा कल्पित युग जो पुराण में लिखा है,
वह 'रामराज्य' फिर दिखाई देगा।

नि:स्व मुख में मुस्कराता दिखाई देगा,
मूक जनता थोड़ा कुछ खाकर सुख से जिएगी। हे,
आजन्म त्यागी, फिर तुम पुकारो,
आ जाएंगे पास अर्धनग्न सन्यासी, वैरागी, जाग्रत होंगे
सत्यान्वेषी, अटल सत्याग्रही,
दुर्दिन अंधकार का अवसान होगा,
और यह संसार उद्‌भासित होगा।

आत्मदान जिसका चिर आदर्श और ध्यान बन गया है,
वह पुनर्जीवित करेगा मुर्दों को,
और आगे बढ़ाएगा।

जिसकी अपनी क्षुधा हुई नहीं शान्त, वह कैसे भरेगा
दूसरों का पेट, देखो! चारों तरफ कैसे त्याग, निष्ठा,
सत्य मलिन हो रहे हैं

गांधीजी ! आओ छोड़कर स्वर्गलोक,
छा गया आज जीवन-पथ में मृत्यु का अंधकार ।

मानव शरीर में तुम इस भूमि पर दर्शन दो।

मूक जनता के आर्त्त अश्रु में तुम दर्शन दो,
तुम्हारा आदर्श और तुम्हारी अमृतवाणी,
फिर विपथगामियों को अपने रास्ते पर ला दे।

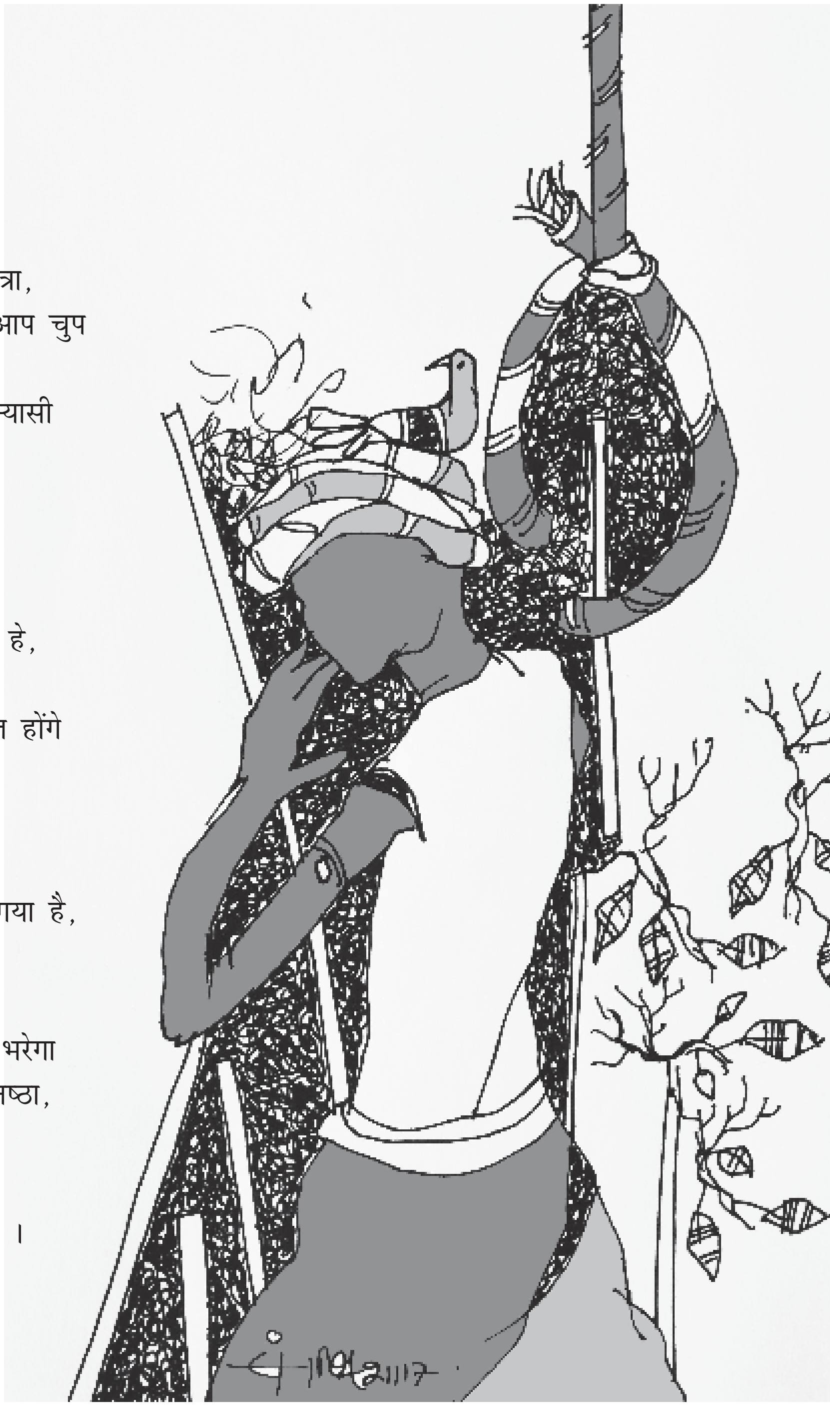

(हिंदी रूपांतरण सच्चिदानंद पट्टनायक)

फोटो में गांधी

गांधी का पार्थिव शरीर

बिरला हाउस में गांधी के अंतिम दर्शन के लिए उमड़े लोग

ग्रामश्री

सुमित्रानंदन पंत

फैली खेतों में दूर तलक
मखमल की कोमल हरियाली,

लिपटीं जिससे रवि की किरणें
चाँदी की सी उजली जाली!

तिनकों के हरे-हरे तन पर
हिल हरित रुधिर है रहा झलक,

श्यामल भूतल पर झुका हुआ
नभ का चिर निर्मल नील फलक!

रोमांचित-सी लगी वसुधा
आई जौ गेहूँ में बाली,

अरहर सनई की सोने की
किंकिणियाँ हैं शोभाशाली!

उड़ती भीनी तैलाक्त गंध
फूली सरसों पीली-पीली,

लो, हरित धरा से झाँक रही
नीलम की कलि, तीसी नीली!

रंग-रंग के फूलों में रिलमिल
हँस रही सखियाँ मटर खड़ी,

मखमली पेटियों-सी लटकीं
छीमियाँ, छिपाए बीज लड़ी!

फिरती हैं रंग-रंग की तितली
रंग-रंग के फूलों पर सुंदर,

फूले फिरते हैं फूल स्वयं
उड़-उड़ वृंतों से वृंतों पर!

अब रजत स्वर्ण मंजरियों से
लद गई आम्र तरु की डाली,

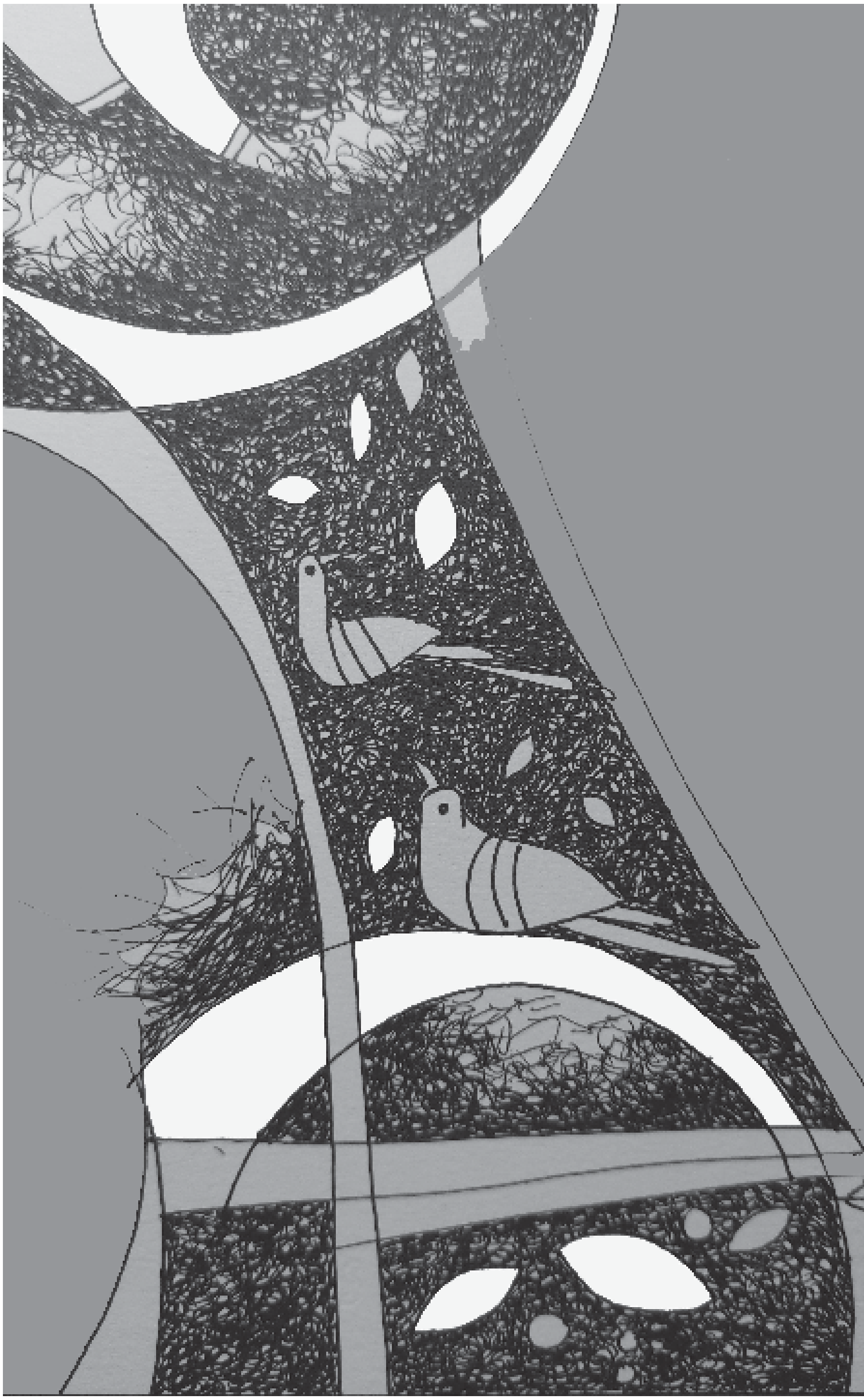

झर रहे ढाक, पीपल के दल,
हो उठी कोकिला मतवाली!

महके कटहल, मुकुलित जामुन,
जंगल में झरबेरी झूली,

फूले आड़ू, नींबू, दाड़िम,
आलू, गोभी, बैंगन, मूली!

पीले मीठे अमरूदों में
अब लाल-लाल चित्तियाँ पड़ी,

पक गए सुनहले मधुर बेर,
अँवली से तरु की डाल जड़ी!

लहलह पालक, महमह धनिया,
लौकी और सेम फलीं, फैलीं

मखमली टमाटर हुए लाल,
मिरचों की बड़ी हरी थैली!

बालू के साँपों से अंकित
गंगा की सतरंगी रेती

सुंदर लगती सरपत छाई
तट पर तरबूजों की खेती;

अँगुली की कँघी से बगुले
कलँगी सँवारते हैं कोई,

तिरते जल में सुरख़ाब, पुलिन पर
मगरौठी रहती सोई!

हँसमुख हरियाली हिम-आतप
सुख से अलसाए-से सोए,

भीगी अँधियाली में निशि की
तारक स्वप्नों में-से खोए-

मरकत डिब्बे सा खुला ग्राम-
जिस पर नीलम नभ आच्छादन-

निरुपम हिमांत में स्निग्ध शांत
निज शोभा से हरता जन मन!

अंतरिक्ष का फोन

क्षमा शर्मा

सवेरे का वक्त था। मम्मा अंतरिक्ष को स्कूल जाने के लिए तैयार कर रही थीं। उसकी टाई ठीक करते हुए उन्होंने पूछा–अंतरिक्ष, तुम्हें पता है, तुम्हारे नाम का मतलब क्या है।

–हां।

तो बताओ। मेरे प्यारे बुलबुल। अब मम्मा के हाथों उसके बालों को संवारने का नम्बर था। उसका बस्ता, पानी की बोतल, लंच बाक्स सब पहले से ही मेज पर रखे जा चुके थे। लंच के साथ एक सेब भी था। उसकी टीचर ने लिखकर भेजा था, लंच के साथ एक फल भी जरूर भेजा जाए। हालांकि वह फल खाने में बहुत आनाकानी करता था। मम्मा, पापा, दादी, दादा जी सब फल काटकर उसके पीछे दौड़ते रहते थे, मगर वह नहीं मानता था। उसे तो चिप्स, नूडल्स, मोमोज, बर्गर, आइसक्रीम, चाकलेट्स खाने का शौक था। मगर जब से स्कूल में जंक फूड की मनाही हुई थी, तब से स्कूल से लगातार बच्चों के लंच में क्या होगा, इसकी सूचना दी जाती थी। स्कूल का कहना था कि बच्चे तभी पढ़ाई में अच्छा कर सकते हैं, खेल–कूद सकते हैं, जब वे क्या खाते हैं, इस पर ध्यान दिया जाए। इसीलिए अब अंतरिक्ष के बस्ते में हमेशा एक फल रखा जाता था। लंच के वक्त टीचर चैक करती थीं। देखती थीं कि सब बच्चे फल खाएं। अंतरिक्ष जब लौटता था तो मम्मा या दादी, पापा या दादा जी जरूर देखते कि उसके बस्ते में कहीं फल बचा तो नहीं है ।

खैर मम्मी ने उसके नाम का मतलब पूछा था, तो वह सोचता हुआ बोला–टीचर ने बताया था, सोलर सिस्टम। आय एम बिग लाइक सोलर सिस्टम।

ओह येस। आगे जाकर तुम इत्ते बिग हो जाओगे। –मम्मा ने दोनों हाथों को फैलाकर बताया। फिर कहा– अच्छा बताओ, सोलर सिस्टम में क्या–क्या होता है।

बहुत से स्टार्स(सितारे), गैलेक्सीज(आकाश गंगाएं), सूरज, चांद। जुपीटर, सैटर्न, मार्स, मरकरी, वीनस

अब मम्मा के हाथों उसके बालों को संवारने का नम्बर था। उसका बस्ता, पानी की बोतल, लंच बाक्स सब पहले से ही मेज पर रखे जा चुके थे। लंच के साथ एक सेब भी था। उसकी टीचर ने लिखकर भेजा था, लंच के साथ एक फल भी जरूर भेजा जाए। हालांकि वह फल खाने में बहुत आनाकानी करता था। मम्मा, पापा, दादी, दादा जी सब फल काटकर उसके पीछे दौड़ते रहते थे...।

–और

–और, बर्ड्स(पक्षी), स्पेसशिप। और मैं।

–हां तुम। मगर तुम तो खुद ही अंतरिक्ष हो। तुम तो इतने बड़े हो कि ये सब तुम्हारे अंदर रहते हैं। वाह..वाह मेरा प्यारा बेटू।

–लेकिन जब स्पेसशिप जाता है तो उसकी पूंछ में आग क्यों लगाते हैं।

–ओफ, ओह तुम्हें तो बहुत कुछ मालूम है, मेरे नन्हे सितारे। मगर ये बात मुझे मालूम नहीं है। मुझे तो लगता है कि स्पेसशिप के पीछे बड़ा सा दीया जलाते हैं, जिससे कि आगे बढ़ते हुए वह रास्ता न भटक जाए। लेकिन साइंस वाले क्या कहते हैं, तुम मुझे अपनी साइंस टीचर से पूछकर बताना।

–मैं भी एक दिन स्पेसशिप में बैठकर जाऊंगा।

–ठीक है जाना। तब मैं भी देखा करूंगी, मेरा अंतरिक्ष स्पेसशिप में देखो वो जा रहा है। है न।

क्यों आप दूर से क्यों देखोगी। मैं तो आप, पापा, दादी, दादा जी सबको अपने साथ ले जाऊंगा। मैं अकेला कैसे जाऊंगा। मुझे तो सबकी बहुत याद आएगी।

–हमें भी तो आएगी। मगर तुम अभी थोड़े ही जा रहे हो। अभी तो स्कूल जाना है।

– लेकिन मैं स्पेसशिप में कब जाऊंगा। मैं अकेला कहीं नहीं जाऊंगा। आप, पापा और दादा, दादी भी साथ चलेंगी। मेरे सब दोस्त अपने मम्मी–पापा के साथ सब जगह जाते हैं, तो मैं क्यों अकेला स्पेसशिप में जाऊं।

–वाह, वाह ये तो सबकी मजेदार पिकनिक होगी। चलो, अब आ जाओ। दूध पिओ। दादा–दादी भी घूमकर लौटते ही होंगे। दादी ने जाने से पहले तुम्हारे लिए पनीर के परांठे बनाए थे।

लेकिन अंतरिक्ष ने परांठे की बात न सुनकर कहा–नहीं आज दूध नहीं पिऊंगा। आई डोंट लाइक मिल्क।

–दूध तो पीना पड़ेगा। अगर टीचर को पता चलेगा तो उन्हें कितना बुरा लगेगा। फिर तुम तो बिग भी नहीं बन पाओगे। सुपरमैन कैसे बनोगे। स्पेसशिप भी तुम्हें ले जाने से मना कर देगा। कहेगा कि उसके अंदर तो सिर्फ वे बच्चे जा सकते हैं जो ताकतवर हों। दूध पीते हों।

–मुझे दूध अच्छा नहीं लगता।

–लो स्पेसशिप में जाने की बात कर रहे हो और दूध नहीं पीना चाहते।

–नहीं ।

फिर तो तुम जाने से रहे। उसमें जाने के लिए तो बहुत सारी ताकत चाहिए। ताकत तो तभी आएगी न जब दूध पिओगे। तुम्हें टीचर ने बताया था न कि बच्चों को खूब दूध पीना चाहिए। मम्मा बोलीं।

–हां लेकिन टीचर ने कहा था कि खूब खेलने के लिए दूध पीना चाहिए, स्पेसशिप में जाने के लिए थोड़े ही न।

अरे भाई, खेलने के लिए दूध इसलिए भी पीना पड़ता है कि जल्दी थक न जाओ। तो स्पेसशिप में जाने के लिए भी तो थकना नहीं चाहिए।

–मम्मा, मुझे आज दूध नहीं, चाकलेट चाहिए। और आसक्रीम।

–चाकलेट भी खा लेना, मगर दूध पहले..

अंतरिक्ष ना–नुकुर करने लगा, तो मां बोली–देखो मैंने आँखें बंद कर ली हैं। घड़ी देखो। देखती हूँ कि जब तक सौ गिनूंगी, तब तक दूध पीते हो कि नहीं। अगर नहीं पिया तो समझ लो कि तुम मुझसे हार गए। फिर तो तुम फुटबाल और टेनिस में भी अपने दोस्तों से कैसे जीतोगे।

–नहीं जी, मैं जीत जाऊंगा।

–मां ने आँखें बंद कीं और उसे अचानक खट की आवाज सुनाई दी।

उसने आँखें खोलकर रोने का नाटक करते हुए कहा–लो, तुमने तो एक ही मिनट में दूध पी लिया । मैं तो अभी पांच तक ही गिन पाई। हे भगवान, इस लड़के ने तो सौ तक गिनने ही नहीं दिया। पांच तक ही पूरा दूध खत्म कर दिया। शाबाश। अब भला तुम्हें फुटबाल चैम्पियन बनने से कौन रोक सकता है।

अंतरिक्ष के ओठों के चारों ओर दूध की मूंछें बन गई थीं और वह शरारती आँखों से मां को देख रहा था–अब तो मैं अच्छी फुटबाल खेलूंगा न।

–और क्या।

–टेनिस भी ।

–बिल्कुल।

–और स्पेसशिप।

उसमें तो बस जाओगे ही।वहां तो तुम मुझे और पापा को भी ले जाओगे।–कहते हुए मम्मा ने गीले तौलिए से उसका मुंह पोंछ दिया।

–क्या मैं आज अपना टेबलेट स्कूल ले जा सकता हूँ। लंच टाइम में गेम खेलूंगा।

–अरे बाबा नहीं, नहीं। स्कूल में टेबलेट और मोबाइल ले जाना तुम जैसे छोटे बच्चों के लिए मना है।

–मगर ऋत्विक तो लाता है ।

–टीचर से छिपाकर रखता होगा। अगर टीचर ने देख लिया तो उसे डांट पड़ेगी। तुम तो टीचर की बात मानते हो। अच्छे बच्चों को टीचर की बात माननी चाहिए कि नहीं।

अभी अंतरिक्ष और मम्मा ये बातें कर ही रहे थे कि उन्हें गाड़ी का हार्न सुनाई दिया। यानि कि पापा उसे बुला रहे थे। स्कूल के लिए देर हो रही थी।

अंतरिक्ष के जाने के बाद मम्मा तैयार होने लगीं। उन्हें भी अपने दफ्तर जाना था। वह नहाने जा ही रही थीं कि दादा–दादी घूमकर लौट आए।

जब तक मम्मा तैयार हुई, दादी ने उनका लंच पैक कर दिया। नाश्ता लगा दिया। नाश्ता खाते मम्मी बोलीं–अम्मा, आज तो परांठे इतने अच्छे बने हैं कि अंतरिक्ष शाम को भी मांगेगा।

–मांगेगा तो शाम को ही बना दूंगी, अभी से बनाकर रखने का कोई फायदा नहीं है।

मम्मी ने जाते हुए कहा–अम्मा, आज मुझे लौटने में कुछ देर हो जाएगी।

अंतरिक्ष के बगीचे में एक गुलाब पर तीन गुलाब खिले थे। उसने कहा–ये तो दादा, दादी और मैं हूँ। मम्मा, पापा कहां हैं।

उसकी बात सुनकर पापा बोले–हम उस सफेद गुलाब के पौधे में छिपे हैं। जल्दी ही बाहर निकल आएंगे। सफेद गुलाब के पौधे पर कई कलियां लगी थीं और खिलने ही वाली थीं।

–क्यों, आप लाल वाले क्यों नहीं हो सकते।

तो ऐसा करते हैं वो लाल वाले मैं, मम्मा और तुम हो। दादी, दादा सफेद गुलाब से निकल आएंगे।

कैसे जी। गुलाब तो इतना छोटा होता है। –अंतरिक्ष ने अपनी दो उंगलियां मोड़ के दिखाईं।

–कैसे क्या, जैसे लाल से हम निकले।

–नहीं मगर गुलाब के अंदर जाएंगे कैसे।

–बस तब हम भी नन्हे से बन जाएंगे।

फिर बड़े कैसे बनेंगे।–अंतरिक्ष का सवाल जायज था। दादा–दादी, पापा क्या जवाब दें।

दादा जी बोले–ऐसा करते हैं हम एक परी को ढूंढ़ लाएंगे। वह अपनी जादू की छड़ी से हमें छोटा बना देगी।

–आपने जो कहानी सुनाई थी उसमें परी ने एक घोड़े को नन्हा सा बना दिया था, वैसा ही ।

–शायद वैसे ही।

–तो परी लाइए।

कहां से लाएं परी। हे भगवान इस लड़के को क्या जवाब दें।–दादी सोच में पड़ गई–देखो, अंतरिक्ष! परी तो परीलोक में रहती है। कभी तुम्हारे सपने में आएगी।

–परीलोक क्या होता है।

अरे भाई परियों का घर। जैसे कि तुम्हारा ये घर।

–उनका स्कूल भी होता है।

–जरूर होता होगा। आखिर परियों के बच्चे कहां पढ़ते होंगे।

–मुझे मेल आई डी या व्हाटस एप नम्बर मिल सकता है। मैसेज करूंगा कि जब परी आए तो अपने बच्चों को भी साथ लेती आए।

–क्यों भला।

–मैं खेलूंगा न उनके साथ।

परी वैसे ही आ जाएगी जैसे कि गिलहरी आई थी। एक दिन पीला खरगोश भी आया था। वैसे ही।

दादी बोलीं–बिल्कुल वैसे ही। खरगोश, लोमड़ी और गिलहरी को तुम बुलाने थोड़े ही गए थे, अपने आप ही आए न तुमसे मिलने। वैसे ही एक दिन परी भी तुम्हारे सपने में आएगी।

(शेष अगले अंक में)

लाइव एयर शो

डॉ सुधा जगदीश गुप्त

मरीन ड्राइव के किनारे लगे खंभों और पेड़ों पर बहुत से पंछी रहते थे। अधिकांशतः कबूतर और कौवे आनंद से उड़ान भरते और खंभों पर लाइन लगाकर बैठ जाते। फिर,गपशप करते। जब मन करता तो समुद्र की लहरों से बातें करते और फिर खंभों पर या पेड़ पर बैठकर आने जाने वाले लोगों की भीड़ को खिलखिलाते हुए देखते। भीड़ में अधिकांशतः बच्चे होते।

कबूतर और कौवों को कभी झगड़ते नहीं देखा था बल्कि एक दूसरे के दुख- सुख में वे हमेशा साथ रहते।

आज कौवों और कबूतरों की सभा थी। सभापति थे कब्बू जी यानी कौवों के प्रधान। जब पूरी सभा भर गई तो कब्बू जी ने पर्यावरण की चिंता व्यक्त करते हुए कहा- समुद्र किनारे ये लोग पिकनिक मनाने आते हैं और बहुत कचरा गंदगी, खाने की सामग्री वगैरह फैलाकर चले जाते हैं। यदि हम हड़ताल कर दें तो इन्हें समझ में आ जाए।

सो तो है, गुटरगूं...गुटरगूं... करते हुए चित्ती कबूतर ने कहा-कल मकर संक्रांति है। ये लोग खूब पतंगे उड़ाते हैं। हमें सावधान रहना होगा।

नन्हें गबरू कबूतर ने कहा- क्यों?

क्योंकि ये लोग इस तरह का माझा उपयोग करते हैं जिससे हम उड़ान भरते पंछी अनजाने में फँस जाते हैं और पंख कट जाते हैं, कभी पैर कट जाते हैं। पिछले साल तो हमारे कितने सारे साथियों की मौत हो गई थी।

तो क्या हम कल उड़ान नहीं भरेंगे? बैठे-बैठे भोजन पानी कैसे मिलेगा?

इसीलिए तो कब्बू जी ने सभा बुलाई है। कुछ उपाय सोचना पड़ेगा।

कब्बू जी ने कहा-

'साथियो जहाँ तक हो सकेगा हम कल नीचे ही भूमि पर जो मिलेगा वही खा- पी लेंगे और खंभे पर बैठकर या पेड़ों पर छुपकर पतंग की उड़ान देख लेंगे'।

'घर पर रहें, सुरक्षित रहें।'

सभी ने एक स्वर में कहा -ठीक है।

सभा समाप्त हुई।

सुबह सूरज निकल आया। धीरे-धीरे धूप बढ़ती गई और पेड़ों पर बैठती हुई मैदान में पसर गई।

कोई भी पंछी आकाश में उड़ता नहीं दिखाई दे रहा था।

सारे पंछी खंभे में कतार लगाकर बैठे मरीन लाइंस देख रहे थे।

करीब 10:30 बज गए। कब्बू ने आवाज लगाई-

अरे... साथियो देखो तो जरा... लोगों की इतनी भीड़ क्यों दिखाई दे रही है ?

सब यहीं चले आ रहे हैं। आसमान में पतंगें भी दिखाई नहीं दे रही!!

चित्ती कबूतर ने भी आश्चर्य से अपनी गर्दन घुमाई -ओह! आज कुछ खास है। यह तो हजारों की संख्या में लोग चले आ रहे हैं। यह सब क्या करने वाले हैं?

नन्हें गबरू ने कहा... हाँ, हाँ, हमारे बराबर छोटे-छोटे बच्चे, काला-काला चश्मा लगाए कितनी मस्ती में चले आ रहे हैं।

कब्बू ने कहा -हजारों में नहीं लाखों की संख्या में लोग हैं। दौड़े चले आ रहे हैं।

तभी कब्बू ने कान लगाकर सुना, लोग कह रहे हैं- 12:00 बज गए। शो शुरू होने वाला है।

वाओ... सारे लोग चिल्लाने लगे... वह देखो आसमान में पैराशूट !!

गबरू ने कहा... इसमें तो आदमी लटक रहे हैं, हनुमान जी की तरह उड़ रहे हैं। क्या हनुमान जी पैराशूट पहनते थे?

नहीं रे गबरु, उनके पास तो उड़ने की शक्ति थी।

अहा! कितने सुंदर लग रहे हैं यह तिरंगे पैराशूट। आसमान में तिरंगे घूम रहे हैं। बच्चे ताली बजा रहे हैं। धीरे-धीरे पैराशूट आसमान से धरती पर उतर रहे हैं। लोग वीडियो बना रहे हैं और यह देखो... सात पैराशूट नीचे उतर गए। सबकी नजरें आसमान पर थीं, बाप रे!! कब्बू और चित्ती ने सारे साथियों को सचेत किया-- कोई भी उड़ना नहीं, चुपचाप बैठे रहो। आज आसमान में ये लोग कोई शो कर रहे हैं।

गबरू ने कहा- हाँ, एयर शो... अरे! अरे!यह कितनी तेज आवाज आ रही है... नीचे से ऊपर की ओर एक साथ, नौ हवाई जहाज, तीर का आकार बनाते हुए ऊपर की ओर धुआँ छोड़ते चले जा रहे हैं...

गबरू ने कहा -हाँ पापा, सच, कितना अच्छा लग रहा है। यह तो हमसे भी तेज उड़ रहे हैं।

हाँ, हमारी उड़ान देखकर ही तो इन मनुष्यों ने यह करिश्मा किया है और अब हम उनके शो देख रहे हैं।

कुछ भी हो मनुष्य ने बहुत तरक्की की है।

हाँ, हाँ, वह देखो वह पलटी मार रहे हैं एक साथ एक लाइन में बिल्कुल हमारी तरह करतब दिखला रहे हैं। सारे पंछियों ने पंख फड़फड़ा कर ताली बजाई।

चित्ती ने आवाज लगाई-

यह भयानक सा दिखने वाला एक हवाई जहाज तो बिल्कुल अलग दिखाई दे रहा है।

हाँ कब्बू, ये मनुष्य कह रहे हैं- यह लड़ाकू विमान है। वह देखो, वो आंटी वीडियो बना रही हैं और कह रही हैं यह रशिया का विमान है। 'सुखोई'। युद्ध के समय गोले छोड़ता है।

वह देखो काला भयंकर इतनी दूर से इतना बड़ा दिखाई दे रहा है... बाप रे! बहुत ही बड़ा होगा पापा! चुप रहो ध्यान से सुनो-

वह अंकल कह रहे हैं, भारत में नहीं है लड़ाकू विमान। रशिया से बुलवाते हैं। पूरे विश्व में दो देश हैं जो हवाई जहाज बनाते हैं, अमेरिका और जर्मनी।

वह देखो... वह हवाई जहाज फिर आ रहे हैं.... वाह! कितने सुंदर करतब दिखा रहे हैं।

अरे, वह तो देखो! पापा!! आसमान में दिल बना दिया इन्होंने। यहाँ से चार, वहाँ से चार, घूमते हुए और बीच में से एक निकालकर तीर बना दिया।

वाह! पूरी धरती,और आसमान तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठे।

अब हेलीकॉप्टर की बारी !! यह अपने करतब दिखाने चले आ रहे हैं सु...ई...ई...।

चित्ती, वैसे यह हवाई जहाज किसने बनाये होंगे ?

कब्बू ने आश्चर्य से आँख मटकाते हुए पूछा।

अरे, अभी तो एक अंकल बच्चों को बता रहे थे- अमेरिकी राइट बंधु ने हम पंछियों को उड़ान भरते देखा और उनकी कल्पना शक्ति ने ही यह आविष्कार किया था।

वाह! जय हो! ! राइट बंधु की।

सुनो, सुनो, वह अंकल बच्चों को यह भी बता रहे थे-राइट बंधु से पहले भारत में हवाई जहाज का आविष्कार हो चुका था जिसे 'शिवकर बापूजी तलपड़े' ने बनाया था। इसकी कहानी बाद में बताएंगे, वे बच्चे को समझा रहे थे।

अच्छा, लेकिन अब तो बहुत देर हो गई। अपने तो पंख जकड़े जा रहे हैं। मन बेचैन हो रहा है, उड़ान भरने के लिए।

उनके करतब खत्म हों तो फिर यह हमारी उड़ान देखें।

हाँ, पूरे एक घंटे का शो लाखों लोगों के साथ हमें भी देखने का सौभाग्य मिल गया।

अरे!! यह भीड़... ओह! सारे लोग जा रहे हैं। शो खत्म हुआ।

आओ,

चलो हम उड़ें। पंख पसार... और एक पल में पूरा आकाश परिंदों की उड़ान से भर गया।

संपर्क:

कटनी, मध्य प्रदेश

मो. 9424914474

गांधी क्विज-9

प्रश्नः1 महात्मा गांधी ने बैरिस्टर बनने के लिए कहाँ दाखिला लिया था?

उत्तरः 1. लंदन
2. अफ्रीका
3. बंबई
4. जर्मनी

प्रश्नः2 महात्मा गांधी की आत्मकथा का नाम क्या है?

उत्तरः 1. सत्य के साथ मेरे प्रयोग
2. अनटु दिस लास्ट
3. सर्वोदय
4. क्या भूलूँ क्या याद करूं

प्रश्नः3 दिल्ली में 'अखिल भारतीय खिलाफत कमेटी' के अधिवेशन की अध्यक्षता किसने की?

उत्तर : 1. महात्मा गांधी
2. सरदार पटेल
3. हकीम अजमल खां
4. आसिफ अली

प्रश्नः4 गांधीजी के राजनीतिक गुरु थे ?

उत्तर : 1. पंडित नेहरू
2. सरदार पटेल
3. गोपाल कृष्ण गोखले
4. महादेव देसाई

प्रश्नः5 महात्मा गांधी खादी को क्या मानते थे?

उत्तरः 1. आर्थिक स्वतंत्रता
2. राजनीतिक स्वतंत्रता
3. सामाजिक स्वतंत्रता
4. आंतरिक स्वतंत्रता

प्रश्नः6 प्रथम विश्व युद्ध के समय गांधी को क्या कहा गया था?

उत्तरः 1. रिक्रूटिंग सार्जेंट
2. नंगा फकीर
3. महात्मा
4. बहादुर

प्रश्नः7 असहयोग आंदोलन को क्यों रोका गया था?

उत्तर : 1. चौरा चौरी कांड के कारण ।
2. काकोरी कांड के कारण
3. जलियाँवाला हत्याकांड के कारण
4. मेरठ कांड के कारण

प्रश्नः8 महात्मा गांधी को किस जेल में रखा गया था?

उत्तर : 1. दिल्ली जेल
2. मथुरा जेल
3. रोहतक जेल
4. यरवदा जेल

प्रश्नः9 साबरमती आश्रम कहाँ पर है?

उत्तर : 1. अहमदाबाद
2. वडोदरा
3. राजकोट
4. सूरत

प्रश्नः10 गांधी जी के बचपन का नाम क्या था ?

उत्तरः 1. अनु
2. मोहन
3. सोनू
4. मोनू

नोटः आप गांधी क्विज के उत्तर antimjangsds@gmail.com पर भेज सकते हैं। प्रथम विजेता को उपहार स्वरूप गांधी साहित्य दिया जायेगा।

गतिविधियाँ

गांधी दर्शन में "अहिंसा का मार्ग" पर कविता प्रतियोगिता

19 दिसंबर 2024 को गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति द्वारा राजघाट स्थित गांधी दर्शन में 'अहिंसा का मार्ग' विषय पर एक कविता प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में दिल्ली और एनसीआर के 50 स्कूलों ने भाग लिया, जिससे माहौल रचनात्मकता और उत्साह से भर गया।

कार्यक्रम में संस्कृति मंत्रालय की संयुक्त सचिव (अकादमी) श्रीमती उमा नंदुरी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहीं। उन्होंने 'एक पेड़ मां के नाम' पहल के तहत गांधी दर्शन परिसर में एक पौधा लगाकर पर्यावरण बचाने का संदेश दिया। उनका स्वागत समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद और प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार ने किया।

इस प्रतियोगिता में एवरग्रीन पब्लिक स्कूल, वसुंधरा एनक्लेव ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। जजों में मशहूर संगीतकार श्री दीपक कैस्टेलिनो, गायक श्री हिमांशु कुमार, कवयित्री श्रीमती सरला मिश्रा और श्री विनोद पराशर शामिल थे।

हिंदी पखवाड़ा प्रतियोगिता के विजेता पुरस्कृत

18 दिसंबर 2024 को गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति ने सितंबर 2024 में आयोजित हिंदी पखवाड़ा प्रतियोगिता के विजेताओं को सम्मानित किया। इस अवसर पर समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने पुरस्कार वितरण किया और हिंदी को परस्पर संवाद की भाषा के रूप में अपनाने पर अपने विचार साझा किए।

समिति के प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार ने भी हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाने के महत्व पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का समापन समिति के शोध अधिकारी डॉ. सौरव राय के धन्यवाद प्रस्ताव के साथ हुआ। मंच संचालन संपादक प्रवीण दत्त शर्मा ने किया।

19 दिसंबर को गांधी दर्शन में भी एक कार्यक्रम आयोजित कर, हिंदी पखवाड़ा के विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद, प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार और कार्यक्रम अधिकारी डॉ. वेदाभ्यास कुंडू ने विभिन्न श्रेणियों में विजेताओं को प्रमाणपत्र प्रदान किए।

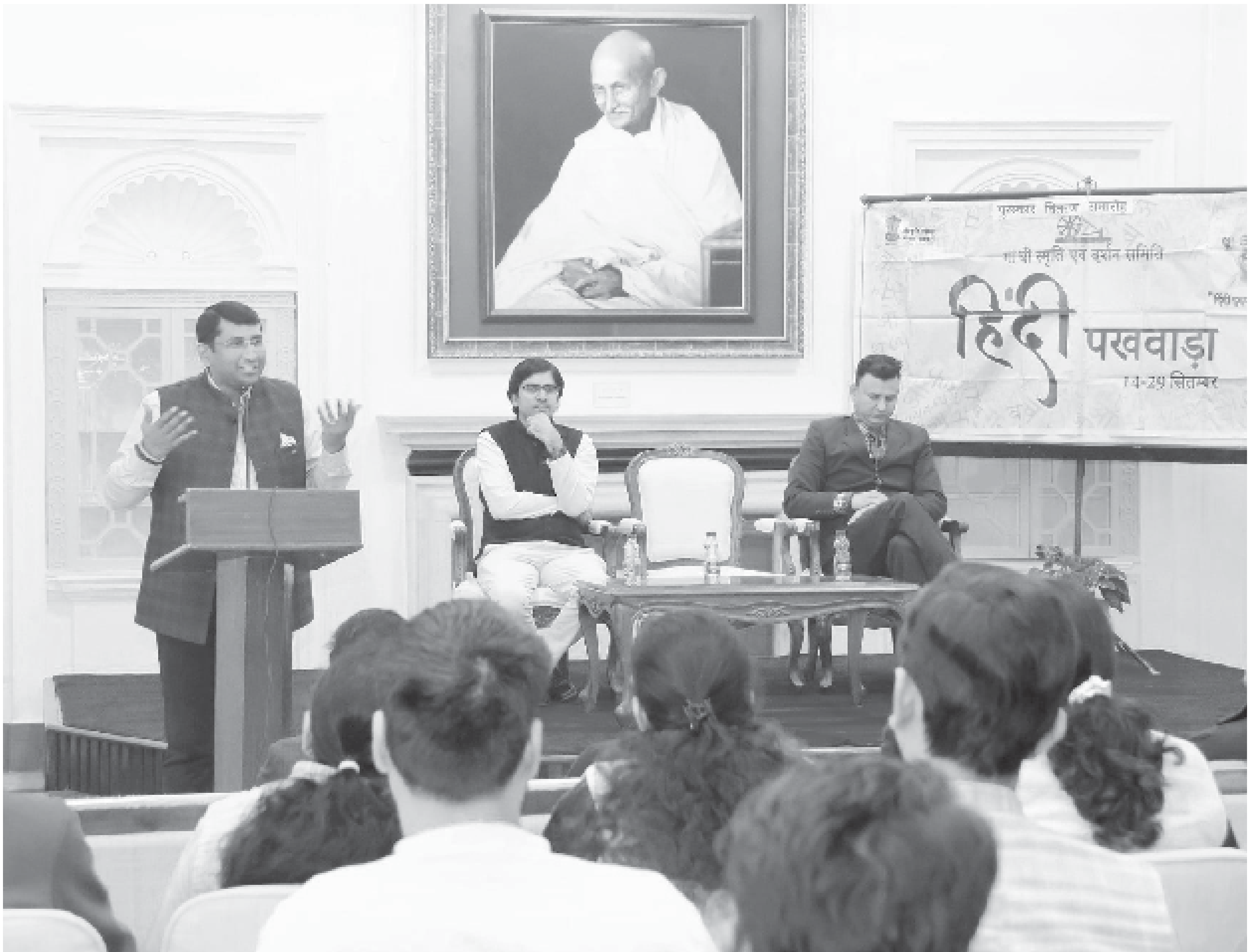

श्रीलंका के राष्ट्रपति पहुंचे गांधी दर्शन

16 दिसंबर 2024, को श्रीलंका के माननीय राष्ट्रपति अनुरा कुमारा दिसानायके ने राजघाट स्थित गांधी दर्शन में महात्मा गांधी की प्रतिमा पर श्रद्धांजलि अर्पित की। उन्होंने वृक्षारोपण कर पर्यावरण संरक्षण का महत्वपूर्ण संदेश दिया। समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया। इस अवसर पर प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार भी उपस्थित रहे।

40 राजनयिकों ने किया गांधी स्मृति का दौरा

सुषमा स्वराज इंस्टीट्यूट ऑफ फॉरेन सर्विस में संयुक्त पाठ्यक्रम में भाग लेने वाले रवांडा, लीबिया और दक्षिण सूडान के लगभग 40 राजनयिकों ने 15 दिसंबर, 2024 को गांधी स्मृति का दौरा किया, जिसके दौरान उन्होंने शहीद स्तंभ पर श्रद्धांजलि अर्पित की और गांधी स्मृति संग्रहालय का दौरा किया। दौरा करने वालों में मध्य अफ्रीका मामलों के अधिकारी, पश्चिमी यूरोप, पूर्वी और दक्षिणी यूरोप, दक्षिण एशिया मामलों, एशिया, प्रशांत और मध्य पूर्व विभाग के प्रभारी अधिकारी, विदेश मंत्रालय और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, विदेश मंत्रालय के प्रथम, द्वितीय और तृतीय सचिव रैंक के राजनयिक शामिल थे।

फोटो – रोकेश शर्मा व गणेश कुमार

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली

'अंतिम जन' मासिक पत्रिका

(सदस्यता प्रपत्र)

मैं गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति द्वारा प्रकाशित अंतिम जन मासिक पत्रिका, (हिन्दी) का/की ग्राहक ....वर्ष/वर्षों के लिये बनना चाहता/चाहती हूँ।

	वर्ष	रुपये		वर्ष	रुपये
[ ]	एक प्रति शुल्क	20/-	[ ]	दो वर्ष का शुल्क	400/-
[ ]	वार्षिक शुल्क	200/-	[ ]	तीन वर्ष का शुल्क	500/-

.... बैंक चेक संख्या/डिमान्ड ड्राफ्ट संख्या ....

दिनांक .... राशि .... Director, Gandhi Smriti & Darshan Samiti, New Delhi में देय, संलग्न है।

ग्राहक का नाम (स्पष्ट अक्षरों में): ....

व्यवसाय : ....

संस्थान : ....

पता : ....

....

पिन कोड : .... राज्य : ....

दूरभाष (कार्यालय) .... निवास .... मोबाईल..............................

ई मेल : ....

हस्ताक्षर ....

कृपया इस प्रोफॉर्मा को भरकर (शुल्क) राशि (चेक/ड्राफ्ट) सहित निम्नलिखित पते पर भेजें :

प्रधान संपादक

'अंतिम जन' मासिक पत्रिका

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली - 110002

आप हमसे संपर्क कर सकते हैं :- दूरभाष : 011-23392796

ई मेल : antimjangsds@gmail.com, 2010gsds@gmail.com

अगर आप 'अंतिम जन' पत्रिका के नियमित पाठक बनना चाहते हैं तो अकाउंट में पेमेंट कर भुगतान की प्रति या स्क्रीनशॉट और अपना पत्राचार का साफ अक्षरों में पता, पिनकोड, मोबाईल नंबर, ईमेल आईडी सहित भेजें।

Name – Gandhi Smriti & Darshan Samiti
A/c No. - 90432010114219
IFSC Code- CNRB0019043
Bank – Canara Bank
Branch – Khan Market, New Delhi-110003

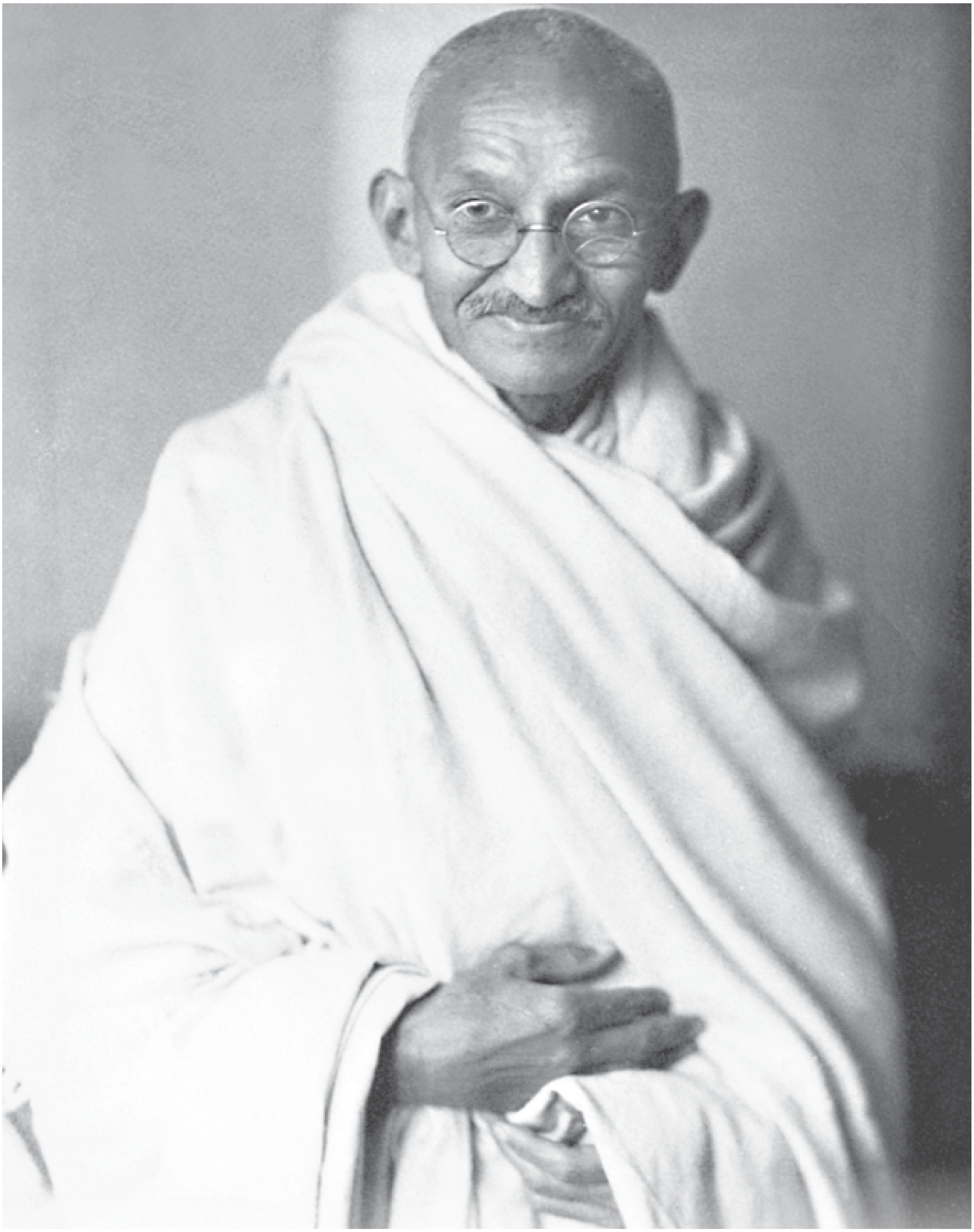

मैं उस रोशनी के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ जो हमारे चारों और व्याप्त अंधकार को मिटा दे। जिन्हें अहिंसा की जीवन्तता में आस्था है वे आएं और मेरे साथ इस प्रार्थना में शामिल हो।

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

हमारे आकर्षण

गांधी स्मृति म्यूज़ियम (तीस जनवरी मार्ग)

* गांधी स्मृति म्यूज़ियम
* डॉल म्यूज़ियम
* शहीद स्तंभ
* मल्टीमीडिया प्रदर्शनी
* महात्मा गांधी के पदचिन्ह
* महात्मा गांधी का कक्ष
* महात्मा गांधी की प्रतिमा
* वर्ल्ड पीस गोंग
* डिजिटल सिग्नेचर (रोबोटिक)

गांधी दर्शन (राजघाट)

* गांधी दर्शन म्यूज़ियम
* क्ले मॉडल प्रदर्शनी
* गांधीजी को समर्पित रेल कोच प्रदर्शनी
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री (200 लोगों के लिये)
* सेमीनार हॉल (150 लोगों के लिये)
* कॉन्फ्रेंस हॉल (300 लोगों के लिये)
* प्रशिक्षण हॉलः (80 लोगों के लिये)
* ओपन थियेटर
* राष्ट्रीय स्वच्छता केन्द्र
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री
* गांधी दर्शन आर्ट गैलरी

(डॉ. ज्वाला प्रसाद)
निदेशक

प्रवेश निःशुल्क (प्रातः 10 बजे से सायंः 6.30 बजे तक), सोमवार अवकाश

हॉल, कमरों एवं आर्ट गैलरी की बुकिंग के लिये संपर्क करें– ईमेलः 2010gsds@gmail.com, 011-23392796

gsdsnewdelhi www.gandhismriti.gov.in

RNI NO. DELHIN/2018/76242

''आप मुझे जो सजा देना चाहते हैं, उसे कम कराने की भावना से मैं यह बयान नहीं दे रहा हूँ। मुझे तो यही जता देना है कि आज्ञा का अनादर करने में मेरा उद्देश्य कानून द्वारा स्थापित सरकार का अपमान करना नहीं है, बल्कि मेरा हृदय जिस अधिक बड़े कानून से-अर्थात अन्तरात्मा की आवाज को स्वीकार करता है, उसका अनुसरण करना ही मेरा उद्देश्य है।''

(मोहनदास करमचंद गांधी)

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली
(एक स्वायत्त निकाय, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रकाशक - मुद्रक : स्वामी गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के लिए पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092 से मुद्रित तथा गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110092 से प्रकाशित।